कृषक भारती

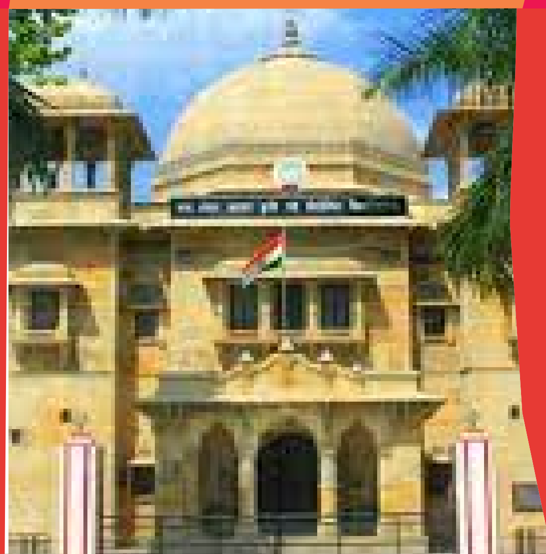

रबी विशेषांक
2024

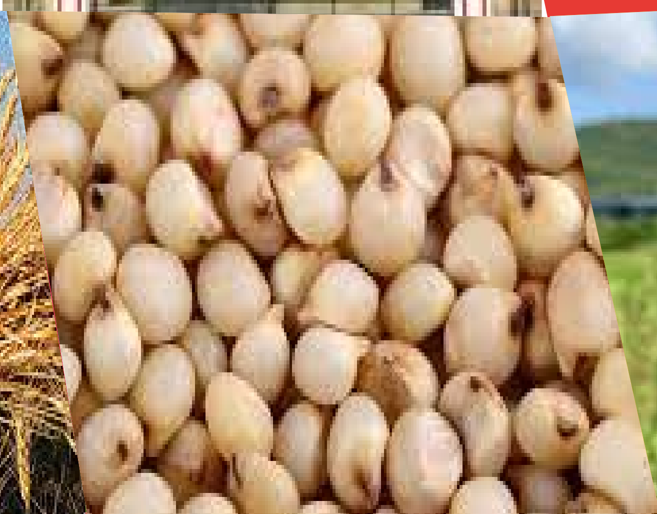

कृषि सूचना ब्यूरो, प्रसार निदेशालय
चन्द्र शेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कानपुर

कृषक भारती

कृषि मूलस्य जीवनम
(रबी विशेषांक 2024)

संरक्षक
डा. आनंद कुमार सिंह
कुलपति

प्रधान सम्पादक
डा. राजेन्द्र कुमार यादव
निदेशक प्रसार

सम्पादक मण्डल
डा. पी.के. राठी, सह निदेशक प्रसार
डा. वी.के. कनौजिया, अध्यक्ष, के.वी.के. कन्नौज
डा. अनिल कुमार सिंह, सम्पत्ति अधिकारी
सोहन लाल वर्मा, प्रसार निदेशालय
डा. रितु पाण्डेय, सहा. प्राध्यापक
डा. आर.पी.एन. सिंह, प्रभारी के.वी.के. रायबरेली

छायांकन
श्री विनोद कुमार यादव
श्री राजेश कुमार शाह
श्री संजय कुमार

एक प्रति का मूल्य : रु. 50/–
(डाक व्यय अतिरिक्त)

इस अंक में

क्र.सं.	विषय सूची	लेखक	पृष्ठ सं.
1.	गेहूँ की उत्पादन तकनीक	डा. सोमवीर सिंह	1
2.	जौ की वैज्ञानिक खेती	डा. सोमवीर सिंह	4
3.	उत्तर प्रदेश के मैदानी क्षेत्रों में मटर की उन्नत खेती	डा. अखिलेश मिश्रा	6
4.	उत्तर प्रदेश में चने की उन्नत खेती : नवीनतम तकनीक और विधियां	डा. अखिलेश मिश्रा	8
5.	राई–सरसों की वैज्ञानिक खेती	डा. महक सिंह	11
6.	अलसी की आधुनिक खेती	डा. महक सिंह	14
7.	सतत् उत्पादन हेतु एकीकृत पोषक तत्व प्रबन्धन	डा. अरविन्द कुमार	17
8.	टमाटर, बैंगन एवं मिर्च का नर्सरी प्रबंधन	डा. राजीव	19
9.	गोभी वर्गीय सब्जियों में नाशीजीव प्रबन्धन	डा. अभिमन्यु यादव	22
10.	पुष्प एवं औषधि पौधों में फसल सुरक्षा के उपाय	डा. राकेश कुमार	25
11.	मसूर की खेती	डा. सचिन यादव	28
12.	किसानों का एटीएम : बकरी पालन	डा. सोहन लाल वर्मा	30
13.	किसान उत्पादक संगठन की समपूर्ण जानकारी	श्री मयंक तिवारी	32
14.	रबी मौसम की मुख्य पौष्टिक चारा फसलों की खेती	श्री शुभम कुमार	34
15.	टमाटर की उन्नत खेती	डा. पृथ्वी पाल	36
16.	रबी ऋतु में उगाई जाने वाली सब्जियों के मूल्य संवर्धन के लिए विभिन्न उपाय	लीना शरणागत	39
17.	गेंदा की उत्पादन तकनीक	डा. आई.पी. सिंह	41
18.	सब्जी फसलों के प्रमुख रोग एवं उनका एकीकृत प्रबन्धन	डा. भूपेन्द्र कुमार सिंह	43
19.	किसान भाई कैसे करें अनाज का सुरक्षित भंडारण	डा. विनोद प्रकाश	48
20.	आलू की वैज्ञानिक खेती	डा. अजय कुमार यादव	50
	कृषक लाभार्थी योजनाओं का नाम		54
	बासमती चावल में कीटनाशकों का प्रयोग प्रतिबन्धित है		54

चन्द्र शेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कानपुर (उत्तर प्रदेश)
दूरभाष : कार्यालय 0512–2555666, 2555444 फैक्स 0512–2549106
कृषक हेल्प लाइन सेवा दूरभाष : 18001805122 (निःशुल्क)
किसान काल सेन्टर : 18001801551 (निःशुल्क)

सूर्य प्रताप शाही
मा0 मंत्री
कृषि, कृषि शिक्षा एवं अनुसंधान
उत्तर प्रदेश शासन
25, नवीन भवन सचिवालय,
लखनऊ

मंत्री
उत्तर प्रदेश

कार्यालय दूरभाष/फैक्स : 2239247
सी.एच. : 2113256
कार्यालय कक्ष संख्या 69–70
मुख्य भवन

दिनांक : 16.10.2024

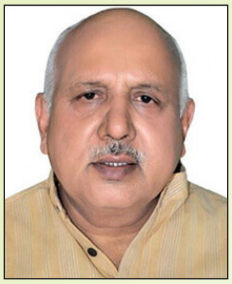

सन्देश

मुझे यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता है कि चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कानपुर में अखिल भारतीय किसान मेला एवं कृषि उद्योग प्रदर्शनी–2024 का आयोजन दिनांक 24 से 25 अक्टूबर, 2024 तक किया जा रहा है तथा इस अवसर पर प्रसार निदेशालय की ओर से कृषक भारती (रबी विशेषांक–2024) का भी प्रकाशन किया जा रहा है।

मुझे विश्वास है कि इस अखिल भारतीय किसान मेला एवं कृषि उद्योग प्रदर्शनी में फसल एवं शाकभाजी उत्पादन तकनीक, उद्यान, कृषि अभियंत्रण एवं प्रौद्योगिकी हस्तान्तरण कार्यक्रम के साथ–साथ अन्य उत्पादन तकनीकों एवं उनके मूल्य संवर्धन की जानकारी तथा कृषकों की व्यवहारिक समस्याओं का भी संमाधान करेंगे।

मैं इस अखिल भारतीय किसान मेला एवं कृषि उद्योग प्रदर्शनी तथा कृषक भारती (रबी विशेषांक–2024) के प्रकाशन की सफलता की कामना करता हूँ।

आपका

(सूर्य प्रताप शाही)
मा0 मंत्री
कृषि, कृषि शिक्षा एवं अनुसंधान
उत्तर प्रदेश शासन
25, नवीन भवन सचिवालय,
लखनऊ

रविन्द्र
आई.ए.एस.
प्रमुख सचिव

अर्द्धशा.प.सं.: 1680 / प्र.स.कृ. / 2024
कृषि, कृषि शिक्षा एवं अनुसंधान, कृषि विपणन,
कृषि विदेश व्यापार एवं निर्यात प्रोत्साहन विभाग,
उत्तर प्रदेश शासन।

दिनांक: 15—10—2024

सन्देश

मुझे यह जानकर हार्दिक प्रशन्नता है कि चन्द्र शेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कानपुर में अखिल भारतीय किसान मेला एवं कृषि उद्योग प्रदर्शनी—2024 का आयोजन दिनांक 24 से 25 अक्टूबर, 2024 तक किया जा रहा है।

2. इस किसान मेला के पुनीत अवसर पर प्रसार निदेशालय द्वारा कृषक—भारती रबी—विशेषांक—2024 का प्रकाशन किया जा रहा है, जो शिक्षा जगत एवं कृषकों हेतु ज्ञानवर्धक होगी। आशा है कि कृषक—भारती किसानों, वैज्ञानिकों, छात्रों एवं प्रसार कार्य में लगे अधिकारियों के लिये प्रेरणात्मक सिद्ध होगी।

3. इस अखिल भारतीय किसान मेला एवं कृषि उद्योग प्रदर्शनी—2024 के आयोजन एवं कृषक भारती—रबी—विशेषांक—2024 के जन उपयोगी एवं उद्देश्यपरक प्रकाशन हेतु मेरी हार्दिक शुभकामनायें।

(रविन्द्र)

15/10/2024

कक्ष सं0 25, नवीन भवन, उ0प्र0 सचिवालय, लखनऊ—226001
कार्य: 0522—2237617, 2213443 | Email : psup.agri@gmail.com

कुलपति की कलम से...........

भारत एक कृषि प्रधान देश है, जिसकी कुल जनसंख्या (144 करोड़) का 65 प्रतिशत लोग गाँवों में रहते है। एक अनुमान के अनुसार सन् 2030 तक देश की जनसंख्या 151 करोड़ और 2050 तक 167 करोड़ हो सकती है। इनके भरण पोषण के लिये वर्ष 2030 तक 450 मिलियन टन खाद्यान्न की आवश्यकता होगी, जबकि वर्तमान में खाद्यान्न उत्पादन लगभग 330 मिलियन टन (2022–23) हैं, जिसको जनसंख्या वृद्धि के अनुरूप बढ़ाने की आवश्यकता होगी। देश में कृषि व्यवसाय आज भी उल्लेखनीय औद्योगिक प्रगति के बावजूद जीविका का एक प्रमुख स्रोत है। देश व आम आदमी की आर्थिक प्रगति कृषि पर एवं कृषि की सफलता मुख्यतः मौसम की परिस्थितियों पर निर्भर करती है, क्योंकि कृषि योग्य भूमि का करीब 48.65% आज भी सिंचाई से वंचित है। कृषि व्यवसाय के बारे में मान्यता है कि खेती में मानसून की महत्वपूर्ण भूमिका है। इससे सम्बन्धित चुनौतियों के समाधान हेतु भारत देश में 75 कृषि विश्वविद्यालय एवं भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के 113 अनुसंधान संस्थान सतत् प्रयत्नशील है।

देश एवं प्रदेश की बढ़ती जनसंख्या के लिये खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने एवं किसानों की आय वृद्धि हेतु कृषि उत्पादन में नियमित एवं टिकाऊ वृद्धि अत्यन्त आवश्यक है। वर्तमान में उपलब्ध कृषि तकनीकी व उत्तम कृषि प्रबन्धन को अपनाकर कृषक एवं कृषक महिलायें फसलों का अधिकतम उत्पादन ले सकते है। बुआई के उपरान्त फसलों का नियमित निरीक्षण एवं सामयिक कृषि कार्यों को समय से निष्पादित कर अधिकतम उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। अब यह समझने का समय है कि बचाव का महत्व उपचार से अधिक है ऐसा करके कृषि को लाभकारी व्यवसाय बनाया जा सकता है।

प्रदेश की जनसंख्या खाद्य एवं पोषण सुरक्षा सुनिश्चित करने हेतु दलहन, तिलहन, अन्तः फसली योजना, मक्का बीज योजना, मक्का एवं आलू से सम्बन्धित प्रसंस्करण इकाई स्थापित की गई है। आज के परिवेश में गुणवत्तायुक्त उत्पादों की मांग बढ़ रही है, इसकी भरपाई तभी हो सकती है जब कृषकों को खेती से सम्बन्धित समस्त नई तकनीकी के साथ–साथ गुणवत्तायुक्त उत्पादन करने की तकनीकों को विश्वविद्यालय व शोध केन्द्रों से कृषकों के खेतों तक पहुँचाया जाय। साथ ही एकीकृत फसल प्रणाली, विविधीकरण व पशुपालन से सम्बन्धित तकनीकी जानकारी का प्रचार–प्रसार कर कृषकों को लाभान्वित किया जाय। जिसके लिये हमारे विश्वविद्यालय का प्रसार निदेशालय उत्तरोत्तर प्रयासों हेतु प्रतिबद्ध है।

किसानों में कृषि की नई वैज्ञानिक तकनीकों के बारे में उचित जानकारी आवश्यक है। किसानों को समृद्ध बनाने हेतु आधुनिक कृषि तरीकों जैसे– सूक्ष्म सिंचाई विधियों से फर्टीगेशन, मृदा परीक्षण, सीडड्रिल, आधुनिक कृषि यंत्रों का इस्तेमाल एवं नवीनतम प्रजाति के उच्च गुणवत्तायुक्त फसलों के बीजों को अपनी कृषि क्रियाओं में शामिल करना नितान्त आवश्यक है। खेती के साथ–साथ किसानों को पशुपालन, मुर्गी पालन, बकरी पालन, सूकर पालन, मत्स्य पालन, मशरूम उत्पादन, मौन पालन जैसे कई उद्यमों को अपनी कृषि के साथ लेकर विकास करना पड़ेगा जिससे किसानों की आय में वृद्धि की जा सके।

हमारे देश में लगभग 680 मिलियन टन फसल अवशेष प्रतिवर्ष उत्पन्न होता है। जिसमें 54 प्रतिशत भाग धान्य/अनाज फसलों से, जिसमें मुख्यतः धान की फसल से 22 प्रतिशत भाग तथा गेहूँ की फसल से 20 प्रतिशत भाग आता है। यदि इन फसल अवशेषों को खेत में सड़ाकर मिलाया जाय तो खेत की उर्वता शक्ति बढ़ने के साथ, भूमि की जल सोखने एवं धारण करने की क्षमता बढ़ेगी। जल शक्ति अभियान चलाये जाने से जल संचयन, भूमि संरक्षण, प्राकृतिक जल स्रोतों का संरक्षण आदि हेतु जागरूकता बढ़ रही है।

विश्व आज जलवायु परिवर्तन को लेकर चिन्तित है। इस दिशा में कृषि वैज्ञानिकों द्वारा निरन्तर शोध कार्य चलाये जा रहे है जिससे ऐसी प्रजातियों को विकसित किया जा रहा है जिन पर जलवायु परिवर्तन का प्रभाव कम से कम पड़े एवं कृषकों को फसलों का उचित उत्पादन मिल सके। देश में सीमान्त व लघु कृषकों की संख्या में वृद्धि (85 प्रतिशत) तथा कृषि जोत के घटते आकार के चलते कृषि को लाभदायी बनाना एक बड़ी चुनौती है। एकीकृत कृषि प्रणाली को अपनाकर ही किसानों को खाद्य व पोषण सुरक्षा प्राप्त करके आर्थिक रूप से समृद्ध बनाया जा सकेगा।

अतः हमारा प्रयास है कि **कृषक भारती (रबी विशेषांक–2024)** का प्रकाशन कर अनुकरणीय एवं व्यवहारिक कृषि तकनीकी को कृषकों एवं पाठकों तक पहुँचाया जाय। आशा ही नहीं अपितु पूर्ण विश्वास है कि इस रबी विशेषांक में वैज्ञानिकों द्वारा प्रस्तुत सरल हिन्दी भाषा में लेख प्रसार कार्यकर्ताओं, कृषकों, कृषक महिलाओं एवं पशुपालकों के लिये अत्याधिक उपयोगी सिद्ध होंगे।

(आनन्द कुमार सिंह)
कुलपति

सम्पादक

देश में तेजी से बढ़ती जनसंख्या के कारण देश को विषम चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। खाद्यान्नों की मांग बढ़ रही है, वहीं भूमि की जोत सिकुड़ती जा रही है। बढ़ती जनसंख्या के दृष्टिगत खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित कराने एवं किसानों की आय वृद्धि हेतु कृषि उत्पादन में नियमित एवं टिकाऊ खेती अत्यन्त आवश्यक है। वर्तमान में उपलब्ध कृषि तकनीकी व उत्तम कृषि प्रबन्धन को अपनाकर अधिकतम उत्पादन ले सकते हैं। बुवाई के उपरान्त फसलों का नियमित निरीक्षण एवं समसामयिक कृषि कार्यों को समय से निष्पादित करके ही अधिकतम उत्पादन प्राप्त हो सकता है। साथ ही बंजर भूमि को कृषि योग्य बनाने की आवश्यकता है। जिससे कृषि क्षेत्र को बढ़ाकर कुल उत्पादन में भी वृद्धि लायी जा सकती है।

कृषि उत्पादन हेतु आवश्यक कृषि निवेश दिन प्रतिदिन महंगे होते जा रहे हैं लेकिन इस अनुपात में कृषि उत्पाद का उचित मूल्य नहीं मिल पाने के कारण किसानों की आमदनी कम होती जा रही है, फलस्वरुप ग्रामीण युवक खेती में रुचि नहीं ले रहे हैं। अतः किसानों की समस्याओं को ध्यान में रखकर जो कृषि वैज्ञानिकों द्वारा कृषि प्रणाली मॉडल विकसित किये गये हैं उन्हें कृषकों द्वारा अपनाकर अपनी आय में आशातीत वृद्धि कर सकते हैं तभी सीमांत एवं छोटे कृषकों का विकास सम्भव है। कृषि प्रणाली प्रबन्धन ही किसानों की आर्थिक दशा सुधार सकता है। हमारी धारणा है कि अनुकरणीय तकनीकी को शीघ्रातिशीघ्र कृषकों तक पहुँचाया जाये ताकि उनकी उपादेयता वे स्वयं देख सकें। देश की आवादी का अधिकांश भाग कृषि पर आधारित है और कृषि जोखिमों और अनिश्चताओं से भरा क्षेत्र है।

रासायनिक उर्वरक तथा कीटनाशी रसायन का उपयोग भूमि और फसल उत्पादन पर विपरीत प्रभाव डाल रहे हैं। विषैले रसायन के प्रति सजग और सचेष्ट रहना समय की माँग है। आज बढ़ते मुँह और घटते भोजन की खाई को पाटना न केवल भारत अपितु सारे विश्व के लिए एक महत्वपूर्ण समस्या है। हमारे प्राचीन ग्रन्थों में कहा गया है कि ''भूख के समान न तो कोई दुःख है, न ही इसके समान दुखदायी कोई रोग है। क्रोध के समान कोई शत्रु नहीं है और भोजन के समान कोई सुख नहीं है।'' किन्तु इसे एक विडम्बना ही कहा जायेगा कि देश की चौथाई जनसंख्या दोनों समय भरपेट भोजन से वंचित है। रासायनिक उर्वरक का असंतुलित प्रयोग मिट्टी को प्रदूषित कर उसके भौतिक, रासायनिक तथा जैविक गुण पर विपरीत प्रभाव डाल रहा है। ऐसी परिस्थिति में उगायी गयी फसलों के उत्पाद के प्रयोग करने से भयंकर बीमारियाँ पैदा होती हैं। रासायनिक उर्वरकों का भूमि में ज्यादा प्रयोग करने से फसलों में सिंचाई की अधिक आवश्यकता पड़ती है। यह प्रक्रिया मिट्टी को लवणीय बना सकती है, जो फसल उगाने के लिए अनुपयुक्त हो सकती है।

हरित क्रान्ति के फलस्वरुप हमारी खेती में सिंचाई संसाधन विकास, उच्च उत्पादक प्रजातियां, रसायनिक उर्वरक, रोग, कीट नाशक, फफूँदी तथा खरपतवार नाशी रसायन आदि से पैदावार एवं

आत्मनिर्भरता बढ़ी है अर्थात खाद्य सुरक्षा मिली परन्तु साथ ही तकनीकी प्रबन्धन के असंतुलन के कारण भूमि की उर्वरा शक्ति में कमी, पर्यावरण प्रदूषित होना, जलस्तर कम होने की समस्यायें पैदा हुई है। जिसके निदान के लिये जैविक खेती, फसल अवशेष प्रबन्धन, हरी खाद, नाडेप कम्पोस्ट बनाने एवं प्रयोग करने पर कार्य किये जा रहे हैं। इन विधाओं को सभी किसान भाईयों को अपनाने की आवश्यकता है।

प्रदेश एवं देश की कृषि योग्य भूमि के क्षेत्रफल में वृद्धि करना आवश्यक है, साथ ही कृषकों को जैविक खेती करने हेतु बढ़ावा दिया जाये जिससे मृदा में जीवांश की मात्रा में वृद्धि कर उत्पादन बढ़ाया जा सकता है एवं मृदा स्वास्थ्य को भी बचाया जा सकता है। मृदा परीक्षण के प्रति कृषकों को जागरूक करना, जिससे प्रत्येक कृषक मृदा परीक्षण के उपरान्त ही फसलोत्पादन लें ताकि रासायनिक उर्वरकों के अंधाधुध प्रयोग को कम किया जा सके।

इस दिशा में **''कृषक भारती रबी विशेषांक–2024''** का प्रकाशन हमारा प्रयास है, जिससे कृषकों को नवीनतम तकनीकी की समसामयिक जानकारी मिल सके। मुझे पूर्ण विश्वास है कि यह विशेषांक कृषकों, उद्यमियों, प्रसार कार्यकर्ताओं व संस्थानों के लिये समान रुप से उपयोगी सिद्ध होगा।

(राजेन्द्र कुमार यादव)
निदेशक प्रसार

गेहूँ की उत्पादन तकनीक

सोमवीर सिंह, विजय कुमार यादव एवं राजेन्द्र कुमार यादव

रबी सस्य अनुभाग, चन्द्र शेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कानपुर–208002

भारत में गेहूँ एक मुख्य खाद्यान्न फसल है। हमारे देश का गेहूँ उत्पादन में चीन के बाद दूसरा स्थान है। आज देश लगभग 112.92 मिलियन टन गेहूँ उत्पादन कर रहा है। उत्तर प्रदेश, पंजाब, मध्य प्रदेश, हरियाणा, राजस्थान एवं बिहार इसके मुख्य उत्पादक राज्य है। उत्तर प्रदेश गेहूँ उत्पादन में सबसे प्रथम राज्य है जहाँ गेहूँ की खेती 9.32 मिलियन हेक्टेयर में करके वर्ष 2023–24 में 35.43 मी. टन उत्पादन प्राप्त हुआ और उत्पादकता 38.04 कु./हे. आंकी गयी। हालांकि, देश की बढ़ती जनसंख्या को देखते हुए गेहूँ उत्पादन में वृद्धि की और अधिक आवश्यकता है। इसके लिए गेहूँ की उन्नत उत्पादन तकनीकियों को अपनाने की आवश्यकता है।

इन तकनीकियों में उन्नत किस्मों का चुनाव, खेत की तैयारी, बुवाई की विधि, बुवाई का समय, बीज शोधन, बीज दर, पंक्तियों की दूरी, उर्वरक प्रबन्धन, खरपतवार नियन्त्रण, जल प्रबन्धन, रोग नियन्त्रण, कीटों एवं चूहों से बचाव, कटाई मडाई एवं भण्डारण आदि प्रमुख है। जिनका विवरण निम्न प्रकार है:–

1. उन्नत प्रजातियों का चयन

वैश्विक जलवायु परिवर्तन को दृष्टिगत रखते हुए गेहूँ की खेती कृषि जलवायु परिस्थियों जैसे– असिंचित समय से, सिंचित समय से, सिंचित विलम्ब से एवं उसरीली भूमि में समय से आदि दशाओं में करने के लिए प्रजातियों के चयन पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। जिनका विवरण निम्न प्रकार है–

प्रजाति	उत्पादकता कुं./हे.	पकने की अवधि (दिन)	पौधों की ऊँचाई (सेमी.)	बाली का रंग	दाने का रंग	संस्तुत क्षेत्र एवं प्रमुख विशेषता
असिंचित दशा (समय से)						
के1317	30–35	120–128	90–95	सफेद/मटमैला	शरबती एवं बड़ा	उत्तर पूर्वी भारत व बुन्देलखण्ड क्षेत्र, उच्च चपाती गुणवत्तायुक्त
के1616	30–35	120–25	105–110	सफेद	शरबती	सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश
एच.आई. 1612	30–35	125–130	90–95	सफेद	शरबती	उत्तर पूर्वी भारत
मगहर (के8027)	30–35	140–145	105–110	सफेद/मटमैला	शरबती एवं बड़ा	उ.प्र. का पूर्वी क्षेत्र, कण्डुवा रोग से अवरोधी
सिंचित दशा (समय से)						
के 1006	55–60	120–125	90–95	सफेद	शरबती	उत्तर पूर्वी भारत, जिंक (49.2 पी.पी.एम.), आयरन (45.4 पी.पी.एम.)
डी.बी.डब्लू 187	55–60	120–125	95–100	सफेद	शरबती	उत्तर पूर्वी भारत
ममता (के. 607)	55–60	120–125	95–100	भूरा	शरबती	सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश
माही (के. 402)	55–60	125–130	85–90	सफेद	शरबती	सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश
शाताब्दी (के. 307)	55–60	120–125	95–100	सफेद	शरबती	उत्तर पूर्वी भारत
देवा (के 9107)	45–50	130–135	105–110	सफेद	शरबती एवं मध्यम	उत्तर पूर्वी भारत, के–68 जैसी दाने की गुणवत्ता युक्त

सिंचित दशा (विलम्ब से)						
उन्नत हलना (के. 9423)	35–45	85–90	75–80	सफेद	शरबती	सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश
हलना (के. 7903)	35–45	80–90	75–85	सफेद मटमैला	शरबती	उत्तर प्रदेश के पश्चिमी व केन्द्रीय भाग
डी.बी.डब्लू. 107	40–45	105–110	85–90	सफेद	शरबती	उत्तर पूर्वी भारत
एच.आई. 1563	35–40	105–110	85–90	सफेद	शरबती	उत्तर पूर्वी भारत
उसरीली भूमि के लिए						
के.आर.एल. 19	35–45	130–145	85–90	सफेद	शरबती	उत्तर पूर्वी भारत
प्रसाद के. 8434	40–45	135–140	90–100	सफेद	शरबती	उत्तर प्रदेश के मध्यम व पश्चिमी क्षेत्र
के.आर.एल. 210	35–45	140–145	95–100	सफेद	शरबती	उत्तर पूर्वी भारत
के.आर.एल. 213	35–40	140–145	95–100	सफेद	शरबती	उत्तर पूर्वी भारत

खेत की तैयारी

खेत की तैयारी के लिए एक बार मिट्टी पलटने वाले डिस्क हैरो तथा कम से कम दो बार कल्टीवेटर अथवा एक बार रोटावेटर से जुताई करें। प्रत्येक जुताई के बाद पाटा अवश्य लगायें। असिंचित क्षेत्रों में सायंकाल जुताई करके दूसरे दिन पाटा लगाने से नमी का समुचित संरक्षण किया जा सकता है।

3. बुवाई की विधियाँ

इसकी बुवाई पंक्तियों में देशी हल के पीछे अथवा सीड ड्रिल से करें। यदि खाद एवं बीज एक साथ बोना है तो फर्टीसीड ड्रिल द्वारा दोनों का प्रयोग संतुलित मात्रा में करना चाहिए।

4. बुवाई का समय

असिंचित दशा में उचित नमीं पर 25 अक्टूबर से 05 नवम्बर के मध्य, समय से सिंचित दशा में 01 नवम्बर से 15 नवम्बर तक, विलम्ब से सिंचित दशा में 05 दिसम्बर से 15 दिसम्बर तक तथा अतिविलम्ब की दशा में जनवरी के प्रथम पखवारे तक बुवाई कर देनी चाहिए। उसर भूमि में बुवाई 05 नवम्बर से 20 नवम्बर तक कर देनी चाहिए।

5. बीज शोधन

बावेस्टिन या कार्वान्डाजिम की 2.5 ग्राम/किग्रा. मात्रा से बीज को शोधित करके बोए।

6. बीज दर एवं पंक्तियों की दूरी

बीज की मात्रा दाने के आकार पर निर्भर करती है। लाइन में बुआई करने पर सामान्य दशा में 100 किग्रा. तथा मोटा दाना 125 किग्रा./हे. तथा विलम्ब की दशा में सामान्य दाना 125 किग्रा./हे. तथा मोटा दाना 150 किग्रा./हे. की दर से प्रयोग करना चाहिए। सीमित सिंचाई वाले क्षेत्रों में रेज्ड वेड विधि से बुआई करने पर सामान्य दशा में 75 किग्रा./हे. तथा मोटा दाना 100 किग्रा./हे. की दर से प्रयोग करना चाहिए। असिंचित समय से एवं उसरीली समय से बुवाई की दशा में बीज का प्रयोग 100–115 किग्रा./हे. की दर से करना चाहिए। असिंचित समय से, सिंचित समय से एवं उसरीली समय से बुवाई की दशा में पंक्तियों की दूरी 20 सेमी. एवं गहराई 5 सेमी. होनी चाहिए तथा विलम्ब की दशा में पंक्तियों की दूरी 18 सेमी. तथा गहराई 4 सेमी. होनी चाहिए।

7. खाद एवं उर्वरक प्रबन्धन

अच्छी उपज के लिए 10 टन/हे. की दर से गोबर की खाद का प्रयोग करना चाहिए। गेहूँ की फसल में उवर्रकों की अहम भूमिका है। उवर्रकों का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर करना चाहिए। गेहूँ की अच्छी फसल प्राप्त करने के लिए असिंचित समय से बुवाई की दशा में 60:30:20, सीमित सिंचाई समय से बुवाई की दशा में 90:60:40, सिंचित समय से बुवाई की दशा में 150:60:40 तथा सिंचित विलम्ब से एवं उसरीली समय से बुवाई की दशा में 120:60:40 किग्रा./हे. की दर से क्रमशः नत्रजन, फास्फोरस एवं पोटाश तथा 25 किग्रा. गंधक का प्रयोग करना चाहिए। अगर खेत में दलहनी फसलें बोई गयी है तो नत्रजन की मात्रा 20 किग्रा./हे. कम प्रयोग करनी चाहिए।

8. खरपतवार नियन्त्रण

गेहूँ की फसल में रबी के सभी संकरी पत्ती जैसे– मंडूसी/कनकी/गुल्ली डंडा/गेहूँसा, जंगली जई, पोआ, लोमड़ घास आदि तथा चौड़ी पत्ती जैसे– बथुआ, खरबथुआ, जंगली, हिरनखुरी, कंडाई, चटरी–मटरी, कृष्णनील, प्याजी आदि खरपतवार

उगते है। इनकी रोकथाम निराई, गुड़ाई करके की जा सकती है। लेकिन निम्नलिखित रसायनों (पेन्डीमैथलीन को छोड़कर–बुवाई के 3–4 दिन बाद तक) का प्रयोग बुवाई के 30 दिन बाद फ्लैटफैन नाजिल से करके भी इनकी रोकथाम की जा सकती है।

मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से 15–15 दिन के अन्तर में दो बार छिड़काव करना चाहिए। गेरूई रोग के लिए प्रोपीकोनॉजोल (टिल्ट) 2.5 किग्रा./हे. मात्रा 600 लीटर पानी में घोलकर 15–15 दिन के अन्तराल पर दो बार छिड़काव करें।

से करने से अधिक सफलता मिलती है। चूहों की रोकथाम के लिए जिंक फास्फाइड एक भाग, सरसों का तेल एक भाग तथा 48 भाग दाना मिलाकर बने विषैले चारे का प्रयोग करें।

12. कटाई मड़ाई व भण्डारण

बालियाँ पक जाने पर, जब

खरपतवारनाशी/शाकनाशी	खरपतवार के प्रकार	रसायन की मात्रा/एकड़	पानी की मात्रा/एकड़
क्लोडिनाफॉप (टोपिक/पॉइंट/झटका)	संकरी पत्ती	160 ग्राम	150 ली.
पिनोक्साडेन (एक्सिल 5 ई.सी.)	संकरी पत्ती	400 मिली.	200 ली.
पिनोक्साप्रॉप (प्यूमा पॉवर)	संकरी पत्ती	400 मिली.	200 ली.
आईसोप्रोट्यूरॉन (आइसोगार्ड 75 डब्ल्यूपी)	संकरी पत्ती	500 ग्राम	200 ली.
सल्फोसल्फ्यल्यूरॉन (लीडर/एस एफ 10/सफल)	संकरी पत्ती	13.5 ग्राम	120 ली.
मैटसल्फयूरॉन (एलग्रीप)	चौड़ी पत्ती	8 ग्राम	200 ली.
कार्फेन्ट्राजोन (एफीनीटि)	चौड़ी पत्ती	20 ग्राम	200 ली.
2, 4–डी (बीडमार)	चौड़ी पत्ती	500 मिली.	200 ली.
सल्फोसल्फ्यूल्यूरॉन् मैटसल्फयूरॉन (टोटल)	संकरी व चौड़ी पत्ती	16 ग्राम	150–200 ली.
सल्फोसल्फ्यूल्यूरॉन् कारफेन्ट्राजोन (ब्राडवे)	संकरी पत्ती व चौड़ी	40 ग्राम	150–200 ली.
मिसोसल्फ्यूरॉन् आइडोसल्फ्यूरॉन (अटलांटिस)	संकरी पत्ती व चौड़ी पत्ती	160 ग्राम	200 ली.
पेन्डीमैथलीन (स्टॉम्प)	संकरी पत्ती व चौड़ी पत्ती	1500–1750 मिली.	200 ली.

9. जल प्रबन्धन

सामान्यतः बौने गेहूँ की अधिकतम उपज प्राप्ति की लिए कुल 30–40 सेमी. जल की आवश्यकता होती है जो निम्नलिखित अवस्थाओं पर उपलब्धता के अनुसार कर देनी चाहिए:

पहली सिंचाई	बुआई से 20–25 दिन बाद	ताजमूल अवस्था
दूसरी सिंचाई	बुआई से 40–45 दिन बाद	कल्ले निकलते समय
तीसरी सिंचाई	बुआई से 60–65 दिन बाद	गाँठ बनते समय
चौथी सिंचाई	बुआई से 80–85 दिन बाद	फूल आने से पूर्व
पांचवी सिंचाई	बुआई से 110–115 दिन बाद	दुग्धावस्था पर

10. रोग नियन्त्रण

गेहूँ में प्रायः झुलसा, गेरूई, कण्डुआ, करनालबण्ट, रोग लगते है। कण्डुआ की रोकथाम के लिए 2.5 ग्राम बीटाबेक्स प्रति किलोग्राम की दर से बीजोपचार करके बुवाई करनी चाहिए। झुलसा रोग के लिए डाइथेन एम–45 की 2 किग्रा. या जिनेब की 2.5 किग्रा.

11. कीटों एवं चूहों से बचाव

प्रायः गेहूँ के पौधे को नुकसान दीमक व गुजिया कीटों द्वारा होता हैं इनसे बचाव के लिए फिप्रोनिल 0.3 प्रतिशत जी./20–22 किग्रा./हे. ग्रेन्यूल को अंतिम जुताई के समय खेत में छिड़क देना चाहिए। यदि खेत तैयारी के समय उक्त कीटनाशी का उपयोग नहीं कर पाते है तब खड़ी फसल में फिप्रोनिल 5 प्रतिशत एस.सी./2.5 ली. प्रति हेक्टर की दर से 50 किलोग्राम बालू में मिलाकर प्रथम सिंचाई के पूर्व छिड़कने से भी दीमक से बचाव किया जा सकता है। चूहों की रोकथाम का कार्य सामूहिक रूप

मोड़ने पर, टूट जाये तो फसल को तुरन्त काटकर मड़ाई करें। गेहूँ की फसल की मड़ाई के बाद दानों को धातु की बनी बखारियों अथवा कोठियों या कमरें में भण्डारण करें। भण्डारण से पूर्व कोठियों तथा कमरें को साफ करके फर्श एवं दिवारों पर मैलाथियान 50 प्रतिशत के घोल (1:100) को 3 ली./100 वर्ग मी. की दर से छिड़क दें। अनाज को बखारी, कोठियों या कमरे में रखने के बाद एल्यूमिनियम फास्फाइड की 3 ग्राम की 2 गोली प्रति टन की दर से रखकर बन्द कर दें। अथवा ई.डी.बी. एम्पुल 3 मिली. प्रति कुन्टल अथवा 30 मिली. (10 एम्पुल) प्रति टन से बखारी के ढक्कन पर पालीथीन लगाकर मिट्टी का लेपन करें और वायुरोधी बनाकर बन्द कर दें। इनके प्रयोग करने में सावधानियाँ अवश्य बरतें।

जौ की वैज्ञानिक खेती

सोमवीर सिंह, राजेन्द्र कुमार यादव एवं विजय कुमार यादव

रबी सस्य अनुभाग, चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कानपुर–208002

जौ सीमान्त भूमि, लवणयुक्त/क्षारीय भूमि या पानी की कम उपलब्धता वाली भूमि तथा बारानी क्षेत्र में अच्छी पैदावार देता है। जौ भारत वर्ष के खाद्यान्नों में एक बहुउद्देशीय खाद्यान्न माना जाता है। वर्तमान समय में जौ में पाये जाने वाले बीटाग्लूकान के कारण से हृदय रोग, रक्त चाप, मधुमेह, मूत्र रोग आदि बीमारियों में औषधि के रूप में प्रयोग किया जा रहा है।

सस्य क्रियायें

जौ की सस्य क्रियाओं में खेत की तैयारी, उपयुक्त किस्मों का चयन, बुवाई का समय, बीज की मात्रा, बीज की गहराई एवं दूरी, बुवाई की विधि, सिंचाई, उर्वरक एवं खाद का प्रयोग, खरपतवार व रोग नियंत्रण आदि शामिल है।

खेत की तैयारी

प्रदेश के मैदानी भागों में बलुई मिट्टी से लेकर मध्यम भार वाली दोमट मिट्टी जिनकी प्रतिक्रियात्मकता उदासीन से लवणता तक है, जौ की खेती के लिए अधिक उपयुक्त है। जुताई का मुख्य उद्देश्य मिट्टी को भुरभुरी बनाना है। डिस्क हैरो एवं कल्टीवेटर या रोटावेटर से जुताई कर खेत की अच्छी तैयारी हो जाती है। बुवाई के समय नमी की मात्रा उपयुक्त होनी चाहिए, क्योंकि उत्तर प्रदेश में विविध फसल अनुक्रमों की वजह से खेतों की तैयारी एवं अवशेष प्रबन्धन काफी मुश्किल है। अतः संसाधन, संरक्षण, तकनीक जैसे जीरो टिलेज, फर्ब्स आदि लोकप्रिय होते जा रहे हैं।

बीजाई का समय एवं बीज की मात्रा

बुवाई की स्थिति	बुवाई का समय	बीज दर किग्रा./हे.
असिंचित समय से	25 अक्टूबर से 10 नवम्बर	100
सिंचित दशा समय से	10 से 25 नवम्बर	100
सिंचित दशा बिलम्ब से	26 नवम्बर से 15 दिसम्बर	125
माल्ट जौ	1 से 20 नवम्बर	100

बीजोपचार

उपचारित बीजों का ही प्रयोग करना चाहिए। थीरम तथा वीटाबैक्स या बाविस्टीन को 1:1 में मिलाकर 2.5 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज हेतु पर्याप्त है।

उत्तर प्रदेश के लिए जौ की संस्तुत प्रजातियाँ

उत्पादन स्थिति	प्रजातियाँ
असिंचित दशा	के.141, के.226 (लखन), के.125 (आजाद), के.560 (हरितमा), के.603 (नर्मदा), के.1149 (गीतांजली)'
सिंचित दशा (समय से)	के.1055 (प्रखर), के.572/10 (ज्योति), के.287 (जागृति), के.409 (प्रीति), नरेन्द्र जौ–5 (उपासना)'
सिंचित दशा (विलम्ब से)	के.329 (मंजुला), नरेन्द्र जौ–2
ऊसर भूमि	आजाद, नरेन्द्र जौ–1, नरेन्द्र जौ–3, एन.डी.बी.1173, आर.डी.2552, के.बी. 1425
माल्ट हेतु	के.551 (ऋतम्भरा), के.508 (प्रगति), डी.डब्लू.आर.यू.बी. 123 (दो धारीय), डी.डब्लू.आर.28 (दो धारीय), नरेन्द्र जौ 1445, एन.पी.डी. 1445
द्विउद्देशीय (चारा–दाना)	के.141, के.125 (आजाद), आर.डी.2552, आर.डी.2035, आर.डी.2715

बोने की विधि एवं दूरी

जौ की बुवाई की सबसे उपयुक्त विधि सीडड्रिल है। देशी हल के पीछे लगे चोंगे में भी बीज डालकर बुवाई की जा सकती है। देशी हल के पीछे बीज डालकर एवं छिड़काव विधि की अपेक्षा सीडड्रिल से पंक्तिबद्ध बुवाई करना उत्तम है। बीज एवं मिट्टी के अच्छे सम्पर्क के लिए पाटा लगाकर मिट्टी को सघन बना देना चाहिए। पंक्ति से पंक्ति की दूरी 23 सेमी. रखें और बुवाई 4 से 6 सेमी. की गहराई पर करें। पिछैती बुवाई के लिए दूरी घटाकर 18 सेमी. कर दें।

सिंचाई

उपलब्ध सिंचाई की संख्या	सिंचाई की अवस्था एवं दिन		
	कल्ले निकलते समय (30–35 दिन बाद)	बाली आने के समय (65–70 दिन बाद)	दाना बनते समय (90–95 दिन बाद)
एक	√	–	–
दो	√	√	–
तीन	√	√	√

- अच्छी पैदावार, दानों की एकरूपता एवं गुणवत्ता सुनिश्चित करने हेतु माल्ट जौ को 4 सिंचाई की आवश्यकता होती है।

- उसरीली भूमि में सिंचाई हल्की करें।

खाद एवं उर्वरक का प्रयोग

उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर करना चाहिए। जौ की असिंचित दशा में नाइट्रोजन, फास्फोरस एवं पोटाश की मात्रा 30:20:20, सिंचित दशा में 60:30:20 और माल्ट के लिए 80:40:20 की मात्रा प्रति हेक्टेयर प्रयोग करें। असिंचित दशा में सम्पूर्ण उर्वरक बुवाई के समय कूड़ों में बीज से 2–3 सेमी. गहराई पर डालें। सिंचित दशा में बुवाई के समय नाइट्रोजन की आधी तथा फास्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा का प्रयोग करें। शेष नाइट्रोजन की आधी मात्रा पहली सिंचाई के बाद टापड्रेसिंग के रूप में प्रयोग करें।

खरपतवार नियंत्रयण

जौ की फसल के खरपतवारों में गहरी, बथुआ, खरतुआ, हिरनखुरी, कृष्णनील, जंगली गाजर, गेंहुँसा, जंगली जई आदि खरपतवार प्रमुख हैं। खरपतवार के प्रकोप के लिए रासायनिक खरपतवारनाशी का प्रयोग करना चाहिए। जहाँ पर चौड़ी एवं सकरी पत्ती दोनों प्रकार के खरपतवार हों वहाँ दोनों खरपतवार नाशियों की संस्तुत मात्रा को मिलाकर प्रयोग करें।

खरपतवार नाशी	खरपतवार	दर (प्रति हे.)	प्रयोग की विधि
2, 4–डी (सोडियम लवण 80 प्रतिशत) डब्लू पी कारफेन्ट्राजान इथाइल 40 प्रतिशत डीएफ	चौड़ी पत्ती	625 ग्राम 50 ग्राम	500–600 लीटर पानी में बीजाई के 30–35 दिन के अन्दर
आइसोप्रोट्यूरान (75 प्रतिशत) डब्लू पी पिनोक्साप्रापन्पी–इथाइल 10 प्रतिशत ई.सी.	संकरी पत्ती	1.25 किग्रा. 1.00 ली.	500–600 लीटर पानी में बीजाई के 30–35 दिन के अन्दर
पैण्डीमेथिलीन (30 प्रतिशत) ई.सी.	संकरी एवं चौड़ी पत्ती	3.30 ली.	जमाव के पूर्व, बुवाई के 3 दिन के अन्दर

कटाई एवं भण्डारण

जब दानों में 20 प्रतिशत नमी रह जाये तब फसल कटने के लिए उपयुक्त मानी जाती है। वैसे तो हाथ से कटाई की जाती है पर शीघ्र कटाई के लिए कम्बाइन हार्वेस्टर का प्रयोग करना चाहिए। फसल पकते ही सुबह में कटनी करें। सूखने के बाद जौ की गट्ठर बना लें तथा थ्रेसर की सहायता से थ्रेसिंग कर लें। अनाज को भण्डारण से पहले तारपोलीन अथवा रंगीन प्लास्टिक की चादरों पर फैला कर तेज धूप में अच्छी तरह सुखा लें, ताकि दानों में नमी की मात्रा 12 प्रतिशत से कम हो जाए। आजकल एल्युमिनियम की बनी बिन्स (कोठिल एवं साइलों) का प्रयोग भण्डारण के लिए किया जा रहा है। भण्डार में कीड़ों से रक्षा के लिए एल्यूमिनियम फास्फाइड की 1 से 3 टिकिया लगभग 10 कुन्तल अनाज में रखनी चाहिए।

उत्तर प्रदेश के मैदानी क्षेत्रों में मटर की उन्नत खेती

अखिलेश मिश्रा, सर्वेंद्र कुमार एवं गीता राय

दलहन अनुभाग, चंद्र शेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कानपुर

मटर एक प्रमुख दलहनी फसल है, जिसका उपयोग सब्जी, दाल और पशु आहार के रूप में होता है। यह फसल पोषक तत्वों से भरपूर होती है, जिसमें प्रोटीन, विटामिन और खनिज तत्व प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। मटर का सेवन स्वास्थ्य के लिए अत्यंत लाभकारी होता है, और यह भारतीय खाद्य संस्कृति का महत्वपूर्ण हिस्सा है। इसके अलावा, मटर की खेती मिट्टी की उर्वरकता बढ़ाने में सहायक होती है, क्योंकि यह नाइट्रोजन को अवशोषित कर मिट्टी में लौटाती है। उन्नत तकनीकों तथा उत्तम प्रबन्धन से मटर के उत्पादन एवं गुणवत्ता में सुधार किया जा सकता है।

मटर की उन्नतशील खेतीः

1. **भूमि चयन और तैयारी** : मटर की खेती के लिए उपयुक्त भूमि दोमट मिट्टी (Loamy Soil) होती है, जिसमें जल निकास की अच्छी सुविधा हो। खेत की तैयारी में प्रथम जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा दो तीन जुताई देशी हल से करके पाटा लगा मिट्टी को भली–भांति जोता और समतल किया जाता है ताकि जल निकासी सुचारू रूप से हो सके।

2. **उन्नत किस्मों का चयनः** उन्नतशील खेती के लिए उच्च उत्पादन वाली किस्मों का चयन आवश्यक है। मटर की उन्नत किस्में उच्च उत्पादन और रोग प्रतिरोधी होती हैं।

3. **बीज की बुवाईः** मटर की बुवाई का उपयुक्त समय अक्टूबर से नवंबर के मध्य होता है। बीजों की बुवाई कतारों में 25–30 सेमी की दूरी पर की जाती है, और पौधों के बीच लगभग 10–15 सेमी की दूरी रखी जाती है।

4. **बीज का उपचारः** बिजाई से पहले बीजों को कप्तान या थीरम 3 ग्राम या कार्बेनडाजिम 2.5 ग्राम से प्रति किलो बीज का उपचार

क्र.सं.	प्रजातियाँ	उत्पादकता (कु./हे.)	पकने की अवधि (दिन)	उपयुक्त क्षेत्र	विशेषतायें
1	रचना	20–25	130–135	सम्पूर्ण उ.प्र.	लम्बे पौधे, सफेद बुकनी अवरोधी
2	इन्द्र (के.पी.एम.आर.–400)	30–32	125–130	बुन्देलखण्ड मध्य उ.प्र.	बौने पौधे दाने सफेद गोल बुकनी, अवरोधी
3	शिखा (के.एफ.पी.डी.–103)	25–30	125–130	तदैव	पौधे लम्बे, दाने सफेद गोल
4	मालवीय मटर 2	20–25	125–130	पूर्वी उ.प्र.	पौधे लम्बे दाने सफेद गोल. पर्णिल आसिता रोग प्रतिरोधी
5	मालवीय मटर 15	22–25	120–125	सम्पूर्ण उ.प्र.	मध्यम बौने पौधे, सफेद बुकनी एवं रतुआ अवरोधी
6	जे.पी.–885	20–25	130–135	बुन्देलखण्ड हेतु	––
7	पूसा प्रभात (डी.डी.आर.–23)	15–18	100–105	पूर्वी उ.प्र.	बुकनी रोग अवरोधी
8	पन्त मटर 5	20–25	130–135	मैदानी क्षेत्र	पौधे लम्बे, हल्के हरे, बुकनी रोग रोधी
9	आदर्श (आईपीएफ 99–15)	23–25	130–135	बुंदेलखण्ड हेतु	लम्बी, सफेद, बुकनी, अवरोधी
10	विकास (आईपीएफडी 99–13)	22–25	100–105	तदैव	बौनी, सफेद, बुकनी, अवरोधी
11	जय (के. पी. एम. आर. 522)	32–35	125–130	पश्चिमी उ.प्र.	बौनी, सफेद, बुकनी, अवरोधी
12	सपना (के. पी. एम. आर. 144–1)	30–32	125–130	सम्पूर्ण उ.प्र.	बौनी, सफेद, रोगरोधी बुकनी
13	प्रकाश	28–32	110–115	बुन्देलखण्ड	बौनी, सफेद, बुकनी रोगरोधी
14	हरियाल	26–30	120–125	पश्चिमी उ.प्र.	बौनी, हरे गोल दाने, सफेद बुकनी अवरोधी
15	पालथी मटर	22–30	125–130	पूर्वी उ.प्र.	पौधे लम्बे, गोल दाने, सफेद बुकनी एवं रतुआ अवरोधी
16	आई.पी.एफ.डी. 10–12	25–30	106–109	पश्चिमी उ.प्र.	हरा रंग
17	पन्त पी–42	24–25	130–140	पश्चिमी उ.प्र.	––
18	अमन (2009)	28–30	120–125	पश्चिमी उ.प्र.	––

करें। रासायनिक तरीके से उपचार के बाद बीजों से अच्छी पैदावार लेने के लिए उन्हें एक बार राइजोबियम लैगूमीनोसोरम से उपचार करें। इसमें 10 प्रतिशत चीनी या गुड़ का घोल होता है। इस घोल को बीजों पर लगाएं और फिर बीज को छांव में सुखाएं। इससे 8–10 प्रतिशत पैदावार में वृद्धि होती है।

5. **सिंचाई और जल प्रबंधनः** मटर को ज्यादा पानी की आवश्यकता नहीं होती, लेकिन शुरुआती चरणों में 2–3 सिंचाई आवश्यक होती हैं। अधिक सिंचाई से पौधे में फफूंद रोग लगने की संभावना बढ़ जाती है, इसलिए जल प्रबंधन सावधानीपूर्वक किया जाना चाहिए।

6. **खाद एवं उर्वरकः** मटर की खेती में जैविक खाद और फॉस्फेट उर्वरकों का उपयोग फायदेमंद होता है। प्रति हेक्टेयर 20–25 किलो नाइट्रोजन, 50 किलो फॉस्फोरस, और 40 किलो पोटाश का प्रयोग अच्छा उत्पादन देने में सहायक होता है।

7. **रोग और कीट प्रबंधनः** मटर की खेती में फली छेदक, कटुआ कीट, और उकठा रोग जैसे कीटों और बीमारियों का प्रकोप होता है। उन्नत खेती में इनसे बचाव के लिए जैविक कीटनाशक और रोगरोधी किस्मों का उपयोग किया जाता है। साथ ही, पौधों के नियमित निरीक्षण से कीट एवं रोग का प्रबंधन संभव है।

8. **फसल सुरक्षा**

(क) प्रमुख कीटों का नियंत्रण

1. समय से बुवाई करनी चाहिए क्योंकि अगेती बोई गयी फसल में तने की मक्खी तथा देर से बोयी गई फसल में फली बेधक कीट के प्रकोप की सम्भावना बढ़ जाती है। 2. यदि कीट का प्रकोप आर्थिक क्षति स्तर पार कर गया हो तो निम्नलिखित कीटनाशकों का प्रयोग करना चाहिए।

1) तने की मक्खी एवं पत्ती सुरंगक कीट के नियंत्रण हेतु बुवाई से पूर्व कार्बोफ्यूरान 3 सी.जी. 15 किग्रा. अथवा फोरेट 10 जी 10 किग्रा. प्रति हेक्टेयर बुवाई से पूर्व मिट्टी में मिलाना चाहिए। खड़ी फसल में कीट नियंत्रण हेतु नियंत्रण हेतु डाईमेथोएट 30 प्रतिशत ई. सी. अथवा मिथाइल–ओ–डेमेटान 25 प्रतिशत ई. सी. की 1.0 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से लगभग 500–600 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए। एजाडिरेक्टिन (नीम आयल) 0.15 प्रतिशत ई.सी., 2.5 ली. प्रति हेक्टेयर की दर से भी प्रयोग किया जा सकता है।

2) फली बेधक कीट एवं अर्द्धकुण्डलीकार कीट के नियंत्रण हेतु निम्नलिखित जैविक/रसायनिक कीटनाशकों में से किसी एक रसायन का बुरकाव अथवा 500–600 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर छिड़काव करना चाहिए। 1. बैसिलस थुरिनजिएन्सिस (बी. टी.) की कर्स्टकी प्रजाति 1.0 किग्रा.। 2. एजाडिरैक्टिन 0.03 प्रतिशत डब्लू. एस. पी. 2.5–3.00 किलोग्राम। 3. एन. पी. वी. (एच) 2 प्रतिशत ए. एस.। 4. फेनवैलरेट 20 प्रतिशत ई.सी. 1.0 लीटर। 5. क्यूनालफास 25 प्रतिशत ई. सी. 2.0 लीटर। 6. मोनोक्रोटोफास 36 प्रतिशत एस. एल. 1.0 लीटर। खेत की निगरानी करते रहें। आवश्यकतानुसार ही दूसरा बुरकाव, छिड़काव 15 दिन के अन्तराल पर करें। एक कीटनाशी को दूसरी बार न दोहरायें।

(ख) प्रमुख रोगों का नियंत्रण

1. उकठाः, अल्टरनेरिया, बुकनी रोग एवं तुलासिता प्रमुख रोग ब्याधियाँ है। इनकी रोकथाम हेतु सुझाव निम्नवत है–

- समय से बुवाई
- बीज शोधन
- अवरोधी प्रजातियों का चुनाव
- आवश्यकतानुसार संस्तुति के आधार पर रोग नियंत्रण हेतु रासायनों का प्रयोग

9. **कटाई और उपजः** मटर की फली 80–90 दिनों में तैयार हो जाती है। जब फलियां हरी और नरम होती हैं, तो उन्हें तोड़ा जाता है। पौधों के पीले होने पर बीज प्राप्त करने के लिए कटाई की जाती है। उन्नतशील खेती से प्रति हेक्टेयर 22–25 क्विटल तक उपज प्राप्त की जा सकती है।

उत्तर प्रदेश में चने की उन्नत खेती : नवीनतम् तकनीक और विधियां

अखिलेश मिश्रा, सर्वेंद्र कुमार एवं गीता राय

दलहन अनुभाग, चंद्र शेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कानपुर–208002

चना रबी ऋतु ने उगायी जाने वाली महत्वपूर्ण दलहन फसल है। विश्व के कुल चना उत्पादन का 70 प्रतिशत भारत में होता है। भारत में चने की खेती सिंचित के साथ–साथ असिंचित क्षेत्रों में की जाती है। रबी मौसम की खेती होने के कारण इसकी खेती शुष्क एवं ठंडे जलवायु फसल में किया जाता है जहाँ पर 60 से 90 से.मी. वर्षा होती है। देश में कुल उगायी जाने वाली दलहन फसलों का उत्पादन लगभग 17.00 मिलियन टन प्रति वर्ष होता है। कुल दलहन फसलों में चने का उत्पादन लगभग 45 प्रतिशत होता है। देश में चने का सबसे अधिक उत्पादन मध्य प्रदेश में होता है, जो कुल चने उत्पादन का 25.3 प्रतिशत है। इसके पश्चात् आन्ध्र प्रदेश (15.4 प्रतिशत), राजस्थान (9.7 प्रतिशत), कर्नाटक (9.6 प्रतिशत) तथा उत्तर प्रदेश (6.4 प्रतिशत) का स्थान आता है। राज्य में चने की औसत उपज (800 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर) अन्य राज्यों जैसे आन्ध्र प्रदेश (1440 कि.ग्रा.), गुजरात (970 कि.ग्रा.), कनार्टक (930 कि.ग्रा.) व महाराष्ट्र (870 कि.ग्रा.) की अपेक्षा काफी कम है। राज्य में चने की औसत उपज कम होने के अन्य कारणों के अतिरिक्त पारम्परिक विधियों द्वारा खेती करना भी प्रमुख कारण हैं। चने की खेती उन्नत विधियों द्वारा करने पर इसकी औसत उपज में दोगुनी से अधिक बढ़ोत्तरी की जा सकती है।

भूमि का चुनाव एवं उसकी तैयारी

चने की खेती के लिए हल्की दोमट या दोमट मिट्टी अच्छी होती है। भूमि में जल निकास की उपयुक्त व्यवस्था होनी चाहिये। भूमि में अधिक क्षारीयता नहीं होनी चाहिये। प्रथम जुताई मिट्टी पलटने वाले हल या डिस्क हैरो से करनी चाहिये। इसके पश्चात् एक क्रास जुताई हैरों से करके पाटा लगाकर भूमि समतल कर देनी चाहिये। फसल को दीमक एवं कटवर्म के प्रकोप से बचाने के लिए अन्तिम जुताई के समय हैप्टाक्लोर (4 प्रतिशत) या क्यूंनालफॉस (1.5 प्रतिशत) या मिथाइल पैराथियोन (2 प्रतिशत) या एन्डोसल्फॉन की (1.5 प्रतिशत) चूर्ण की 25 कि.ग्रा. मात्रा को प्रति हैक्टेयर की दर से मिट्टी में अच्छी प्रकार मिला देनी चाहिये।

चने की उन्नत प्रजातियाँ/ किस्मों का चयन

चने की फसल से अधिक उपज प्राप्त करने के लिए उपयुक्त किस्मों का चुनाव बहुत ही आवश्यक है। चने की अनेक उन्नत किस्में विकसित की गई हैं। जिसका विवरण निम्नवत् है–

देशी प्रजातियाँ

क्रम	बुआई प्रजातियाँ/मुख्य किस्में	चने की किस्मों की मुख्य विशेषताएं
1	गुजरात चना–4	उत्पादकता 20–25 क्विंटल प्रति हेक्टेयर, पकने की अवधि 120–130 दिन होती है, पौधा मध्यम बड़ा उकठा अवरोधी सिंचित एवं असिंचित दशा के लिए उपयुक्त होता है।
2	अवरोधी	उत्पादकता 25–30 क्विंटल प्रति हेक्टेयर, पकने की अवधि 145–150 दिन होती है, पौधे मध्यम ऊँचाई (सेमी इरेक्ट) भूरे रंग के दाने व उकठा अवरोधी होता है।
3	पूसा – 256	उत्पादकता 25–30 क्विंटल प्रति हेक्टेयर, पकने की अवधि 135–140 दिन होती है, पौधे की ऊँचाई मध्यम, पत्ती चौड़ी, दाने का रंग भूरा एवं एस्कोकाइटा ब्लाइट बीमारियों के प्रति सहिष्णु होता है।
4	के. डब्लू. आर. – 108	उत्पादकता 25–30 क्विंटल प्रति हेक्टेयर, पकने की अवधि 130–135 दिन होती है, दाने का रंग भूरा, पौधे मध्यम ऊँचाई, उकठा अवरोधी होता है।
5	राधे	उत्पादकता 25–30 क्विंटल प्रति हेक्टेयर, पकने की अवधि 140–150 दिन होती है, इसका दाना बड़ा होता है।
6	जे. जी. – 16	उत्पादकता 20–22 क्विंटल प्रति हेक्टेयर, पकने की अवधि 135–140 दिन होती है, उकठा अवरोधी बुन्देलखण्ड हेतु।
7	के. – 850	उत्पादकता 25–30 क्विंटल प्रति हेक्टेयर, पकने की अवधि 145–150 दिन होती है, इसका दाना बड़ा, उकठा ग्रसित होता है।
8	डी. सी. पी. – 92–3	उत्पादकता 20–22 क्विंटल प्रति हेक्टेयर, पकने की अवधि 145–150 दिन होती है, उकठा अवरोधी, छोटा पीला दाना होता है।

9	आधार (आर.एस.जी. 963)	उत्पादकता 19–20 क्विंटल प्रति हेक्टेयर, पकने की अवधि 125–130 दिन होती है, उकठा, अवरोधी होता है।
10	डब्लू. सी. जी. – 1	उत्पादकता 25–30 क्विंटल प्रति हेक्टेयर, पकने की अवधि 135–145 दिन होती है, इसका दाना बड़ा होता है।
11	डब्लू. सी. जी. – 2	उत्पादकता 20–25 क्विंटल प्रति हेक्टेयर, पकने की अवधि 130–135 दिन होती है, इसके छोटे दाने वाली उकठा प्रतिरोधी होते है।
12	के. जी. डी. – 1168 (आलोक)	उत्पादकता 25–30 क्विंटल प्रति हेक्टेयर, पकने की अवधि 150–155 दिन होती है, यह उकठा अवरोधी होता है।

काबुली चने की उन्नत विकसित किस्में:

1	पूसा–1003	उत्पादकता 20–22 क्विंटल प्रति हेक्टेयर, पकने की अवधि 135–145 दिन होती है, दाना मध्यम बड़ा उकठा सहिष्णु होता है।
2	एच. के. – 94–134	उत्पादकता 25–30 क्विंटल प्रति हेक्टेयर, पकने की अवधि 140–145 दिन होती है, दाना बड़ा उकठा, सहिष्णु होता है।
3	चमत्कार (वी. जी. – 1053)	उत्पादकता 15–16 क्विंटल प्रति हेक्टेयर, पकने की अवधि 135–145 दिन होती है, दाना बड़ा होता है।
4	जे. जी. के. – 1	उत्पादकता 17–18 क्विंटल प्रति हेक्टेयर, पकने की अवधि 110–115 दिन होती है, बड़ा दाना उकठा सहिष्णु होता है।
5	शुभ्रा	उत्पादकता 18–20 क्विंटल प्रति हेक्टेयर, पकने की अवधि 125 दिन होती है, उकठा अवरोधी होता है।
6	उज्ज्वल	उत्पादकता 18–20 क्विंटल प्रति हेक्टेयर, पकने की अवधि 125 दिन होती है, उकठा अवरोधी होता है।

देर से बुआई के लिए उपयुक्त किस्में:

1	पूसा – 372	उत्पादकता 25–30 क्विंटल प्रति हेक्टेयर, पकने की अवधि 130–140 दिन होती है, उकठा, ब्लाइट एवं जड़ गलन के प्रति सहिष्णु होता है।
2	उदय	उत्पादकता 20–25 क्विंटल प्रति हेक्टेयर, पकने की अवधि 130–140 दिन होती है, दाने का रंग भूरा, मध्यम ऊँचाई होता है।
3	पन्त जी . – 186	उत्पादकता 20–25 क्विंटल प्रति हेक्टेयर, पकने की अवधि 120–130 दिन होती है, पौधे मध्यम ऊँचाई, उकठा सहिष्णु होता है।
4	आई. सी. पी	उत्पादकता 20–25 क्विंटल प्रति हेक्टेयर, पकने की अवधि 130–135 दिन होती है, उकठा रोग रोधी, दाना मध्यम आकार का होता है।

चने की बुआई का समय, बीज दर, बीज शोधन एवं बीजोपचार:

समयः असिंचित दशा में चने की बुआई अक्टूबर के द्वितीय अथवा तृतीय सप्ताह तक आवश्यक कर देनी चाहिए। सिंचित दशा में बुआई नवम्बर के द्वितीय सप्ताह तक तथा पछैती बुआई दिसम्बर के प्रथम सप्ताह तक की जा सकती है। बुआई हल के पीछे कूंडो में 6–8 से.मी. की गहराई पर करनी चाहिए। कूंड से कूंड की दुरी असिंचित तथा पछैती दशा में बुआई में 30 सेमी. तथा सिंचित एवं काबर या मार भूमि में 45 सेमी. रखनी चाहिए।

बीज दरः छोटे दाने का 75–80 किग्रा. प्रति हेक्टर तथा बड़े दाने की प्रजाति का 90–100 किग्रा./हेक्टेयर। बोने से पूर्व बीजों की अंकुरण क्षमता की जांच स्वयं जरूर करें। ऐसा करने के लिये 100 बीजों को पानी में आठ घंटे तक भिगों दें। पानी से निकालकर गीले तौलिये या बोरे में ढक कर साधारण कमरे के तामान पर रखें। 4–5 दिन बाद अंकुरित बीजों की संख्या गिन लें। 90 से अधिक बीज अंकुरित हुए है तो अंकुरण प्रतिशत ठीक है। यदि इससे कम है तो बोनी के लिये उच्च गुणवत्ता वाले बीज का उपयोग करें या बीज की मात्रा बढ़ा दें।

बीज शोधन/बीजोपचारः चने के बीज सर्वप्रथम फफूंदनाशी फिर कीटनाशी तथा अन्त में राजोबियम कल्चर से उपचारित करें। जड़ गलन व उकटा रोग की रोकथाम के लिए बीज को कार्बेन्डाजिम या मैन्कोजेब या थीरम की 1.5 से 2 ग्राम मात्रा द्वारा प्रति कि.ग्रा. बीज दर से उपचारित करें। दीमक एवं अन्य भूमिगत कीटों की रोकथाम हेतु क्लोरपाईरीफास 20 ईसी या एन्डोसल्फान 35 ईसी की 8 मिलीलीटर मात्रा प्रति किलो बीज दर से उपचारित करके बुवाई करनी चाहिये। अन्त में 10 किग्रा बीज को राइजोबियम कल्चर के एक एवं फास्फोरस घुलनशील जीवाणु के एक पैकेट द्वारा क्षेत्र के लिए आवश्यक बीज की मात्रा को उपचारित करके बुवाई करनी चाहिये। बीज को उपचारित करके लिए एक लीटर पानी में 250 ग्राम गुड़ को गर्म करके ठंडा होने पर उसमें राइजोबियम कल्चर व फास्फोरस घुलनशील जीवाणु को अच्छी प्रकार मिलाकर उसमें बीज उपचारित करना चाहिये। उपचारित बीज को कुछ देर छाया में सूखाकर बुवाई कर देनी चाहिये।

सावधानीः राइजोबियम कल्चर से बीज को उपचारित करने से बाद धुप में नहीं सुखाना चाहिए और जहाँ तक सम्भव हो सके, बीज उपचार दोपहर के बाद

करना चाहिए ताकि बीज शाम को ही अथवा दुसरे दिन प्रातः बोया जा सकें।

खाद या उर्वरकः चने की फसल दलहनी होने के कारण इसकी नाइट्रोजन की कम आवश्यकता होती है क्योंकि चने के पौधों की जड़ों में ग्रन्थियां पाई जाती है। जो पौधे की नाइट्रोजन की काफी मात्रा की आवश्यकता की पूर्ति कर देती है। प्रारम्भिक अवस्था में पौधे की जड़ों में ग्रन्थियों का पूर्ण विकास न होने के कारण पौधे को भूमि से नाइट्रोजन लेनी होती है। अतः 20 किग्रा. नत्रजन, 60 किग्रा. फास्फोरस, 20 किग्रा. पोटाश एवं 20 किग्रा. गंधक का प्रयोग प्रति हेक्टेयर की दर से कूंडों में डालकर उर्वरक की पूर्ति की जा सकती है। एकीकृत पोषक प्रबन्धन विधि द्वारा पोषक तत्वों की आपूर्ति करना लाभदायक होता है। एक हेक्टेयर क्षेत्र के लिए 2.50 टन गोबर या कस्पोस्ट खाद को भूमि की तैयारी के समय अच्छी प्रकार से मिट्टी में मिला देनी चाहिये। असिंचित अथवा देर से बुआई की दशा में 2 प्रतिशत यूरिया के घोल का फूल आने के समय छिड़काव लाभकारी पाया गया है।

निराई–गुड़ाई एवं खरपतवार नियंत्रणः

खरपतवार खेत में चने की फसल से विभिन्न प्रकार से प्रतिस्पर्धा करते हैं। खरपतवारों द्वारा होने वाली हानि को रोकने के लिए चने की फसल में दो बार गुड़ाई करना पर्याप्त होता है। प्रथम गुड़ाई फसल बुवाई के 30–35 दिन पश्चात् व दूसरी 50–55 दिनों बाद करनी चाहिये। यदि मजदूरों की उपलब्धता न हो तो फसल बुवाई के तुरन्त पश्चात् पैन्डीमैथ्थलीन की 3.3 लीटर मात्रा को एवं बुवाई के 20–30 दिनों बाद क्यूजालोफोप इथाइल का 500 लीटर पानी में घोल बनाकर खेत में समान रूप से मशीन द्वारा छिड़काव करना चाहिये। फिर बुवाई के 30–35 दिनों बाद एक गुड़ाई कर देनी चाहिये।

सिंचाईः

प्रायः चने की खेती असिंचित दशा में की जाती है। यदि पानी की सुविधा हो तो फली बनते समय एक सिंचाई अवश्य करें। सिंचित दशा में पहली सिंचाई शाखायें बनते समय (बुवाई के 45–60 दिन बाद) तथा दूसरी सिंचाई फली बनते समय देने से अधिक लाभ मिलता है। चना में फूल बनने की सक्रिय अवस्था में सिंचाई नहीं करनी चाहिए। इस समय सिंचाई करने पर फूल झड़ सकते हैं एवं अत्यधिक वानस्पतिक वृद्धि हो सकती है। रबी दलहन में हल्की सिंचाई (4–5 से.मी.) करनी चाहिए, क्योंकि अधिक पानी देने से अनावश्यक वानस्पतिक वृद्धि होती है एवं दाने की उपज में कमी आती है। चने की फसल में स्प्रिंकलर (बौछारी विधि) से सिंचाई करें, ध्यान रहे खेत में अधिक समय तक पानी भरा नहीं रहना चाहिये इससे फसल के पौधों को नुकसान हो सकता है।

शीर्ष शाखायें तोड़ना (खुटाई):

खेत में चना के पौधे जब लगभग 20–25 से.मी. के हों (30–40 दिनों के भीतर) तब शाखाओं के ऊपरी भाग को तोड़ देने पर उत्पादन में वृद्धि होती है।

पाले से फसल का बचावः

चने की फसल में पाले के प्रभाव के कारण काफी क्षति हो जाती है। पाले के पड़ने की सम्भावना दिसम्बर–जनवरी में अधिक होती है। पाले के प्रभाव से फसल को बचाने के लिए फसल में गन्धक के तेजाब की 0.1 प्रतिशत मात्रा यानि एक लीटर गन्धक के तेजाब को 1000 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिये। पाला पड़ने की सम्भावना होने पर खेत के चारों और धुआं करना भी लाभदायक रहता है।

फसल की कटाई, मड़ाई एवं भण्डारणः

जब पत्तियाँ व फलियाँ पीली व भूरे रंग की हो जाये तथा पत्तियाँ गिरने लगे एवं दाने सख्त हो जाये तो फसल की कटाई कर लेनी चाहिये। भण्डारण से पूर्व बीजों को फैलाकर सुखाना चाहिये। भण्डारण के लिए चना के दानों में लगभग 10–12 प्रतिशत नमीं होनी चाहिये, साबुतदानों की अपेक्षा दाल बनाकर भण्डारण करने पर घुन से क्षति कम होती है। साफ सुथरें नमी रहित भण्डारण गृह में जूट की बोरियाँ या लोहे की टंकियों में भरकर सुरक्षित स्थान पर भण्डारित कर लेना चाहिये।

राई-सरसों की वैज्ञानिक खेती

महक सिंह, आर.के. यादव एवं पी.के. सिंह

अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग, चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कानपुर–208002

खेत की तैयारीः खेत की पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करने के बाद में पाटा लगाकर खेत को भुरभुरा बना लेना चाहिए, यदि खेत की नमी कम हो तो पलेवा करके खेत को तैयार करना चाहिये। ट्रैक्टर चालित रोटावेटर द्वारा खेत एक बार में अच्छी तरह से तैयार हो जाता है।

राई–सरसों की उन्नतशील प्रजातियाँ

	प्रजातियाँ	उत्पादन क्षमता (कु./हे.)	पकने की अवधि (दिनो में)	उपर्युक्त क्षेत्र
तोरिया एवं पीली सरसों की प्रजातियाँ				
1	तपेश्वरी (तोरिया)	12–15	90–95	असिंचित/सिंचित क्षेत्र
2	आजाद चेतना (तोरिया)	10–12	90–95	असिंचित/सिंचित क्षेत्र
3	उत्तरा (तोरिया)	12–14	90–95	असिंचित/सिंचित क्षेत्र
4	पी.टी. 508 (तोरिया)	12–14	90–95	असिंचित/सिंचित क्षेत्र
5	पन्त पीली सरसों–1	15–18	120–125	सम्पूर्ण उ.प्र.
6	पीताम्बरी (पीली सरसों)	18–20	115–120	सम्पूर्ण भारत वर्ष
7	वाई.एस.एच. 401	15–18	120–125	सम्पूर्ण उ.प्र.
राई की अगेती बुवाई के लिये प्रजातियाँ				
1	कान्ती (आर.के. 9807)	18–20	100–105	सम्पूर्ण उ.प्र.
2	नरेन्द्र अगेती राई –4	15–18	105–110	सम्पूर्ण उ.प्र.
3	पूसा अग्रणी	15–18	110–120	सम्पूर्ण उ.प्र.
राई की समय से बुवाई के लिये प्रजातियाँ				
1	वरूणा (टा.–59)	22–28	125–130	सम्पूर्ण भारत वर्ष
2	बसन्ती (आर.के.– 8501 पीली)	20–25	130–135	सम्पूर्ण उ.प्र. (सफेद रस्ट अवरोधी)
3	रोहिणी (के.आर.बी. 24)	20–28	130–135	सम्पूर्ण उ.प्र. हेतु (अधिक पकने पर दाना नहीं चटकता है।)
4	सुरेखा (के.एम.आर. 16–02)	25–28	125–130	सम्पूर्ण उ.प्र. (जमाव के समय उच्च तापक्रम के प्रति सहिष्णु)
5	माया (आर.के. 9902)	22–25	130–135	सम्पूर्ण भारत वर्ष
6	जे.के. पुखराज	22–25	130–135	सम्पूर्ण उ.प्र.
7	आर.एच.– 749	22–25	130–135	सम्पूर्ण भारत वर्ष
8	आर.एच.– 725	25–30	130–135	सम्पूर्ण भारत वर्ष
9	पी.एम. 28 पी.एम. 30 एवं पी.एम. 31	20–22	135–140	सम्पूर्ण उ.प्र.
राई की विलम्ब से बुवाई के लिये प्रजातियाँ				
1	आशीर्वाद (आर.के. 01–3)	20–22	130–135	सम्पूर्ण भारत वर्ष
2	वरदान	18–20	120–125	सम्पूर्ण भारत वर्ष
राई की असिंचित क्षेत्रों के लिये प्रजातियाँ				
1	वैभव (आर.के. 1418)	15–20	120–125	सम्पूर्ण उ.प्र.
2	वरूणा (टा.–59)	15–20	120–125	सम्पूर्ण भारत वर्ष
3	आर.जी.एन.–296	20–22	135–140	सम्पूर्ण उ.प्र.
4	गिरिराज (आई.जे.–31)	22–25	150–150	सम्पूर्ण उ.प्र.

राई की क्षारीय/लवणीय भूमि हेतु प्रजातियाँ				
1	नरेन्द्र राई–8501 (एन.डी.आर.–8501)	16–18	135–140	सम्पूर्ण भारत वर्ष
2	सी.एस. 52	18–20	135–145	सम्पूर्ण उ.प्र.
3	सी.एस. 54	18–20	135–145	सम्पूर्ण उ.प्र.
4	सी.एस. 58	18–20	135–140	सम्पूर्ण उ.प्र.
5	सी.एस. 61	18–20	135–140	सम्पूर्ण उ.प्र.
राई की शंकर प्रजातियाँ				
1	एन.आर.सी.एच.बी.–506	25–28	140–145	सम्पूर्ण उ.प्र.
2	डी.एच.एम.–1	25–28	130–135	सम्पूर्ण उ.प्र.
3	डी.एच.एम.–101	25–28	135–140	सम्पूर्ण उ.प्र.
4	कैरल पी.ए.सी. 432	22–25	130–135	सम्पूर्ण उ.प्र.
राई की गुणवत्तायुक्त प्रजातियाँ				
1	पूसा डबल जीरो–31 (पीएम–31)	20–22	140–145	बायो फोर्टिफाइड प्रजाति इरूसिक अम्ल 2 प्रतिशत से कम, ग्लूकोसाइनोलोट 30 क्यू से कम
2	पूसा सरसों–29 (पीएम–29)	20–22	145–155	इरूसिक अम्ल 2 प्रतिशत से कम
3	पूसा डबल जीरो–21 (पीएम–21)	20–22	135–140	इरूसिक अम्ल 2 प्रतिशत से कम

बीज दरः

तोरिया 04 कि.ग्रा./हेक्टेयर

राई 05 कि.ग्रा./हेक्टेयर

बीज शोधनः बीज जनित रोगों से सुरक्षा हेतु 2.5 ग्राम थीरम प्रति किलो की दर से बीज को उपचारित करके बुवाई करें। मैटालेक्सिल 35 प्रतिशत डब्लू.एस. 2 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज दर से बीज शोधन करने से सफेद गेरूई एवं तुलासित रोग की प्रारम्भिक अवथा में रोकथाम हो जाती है।

बुवाई का समय एवं तिथिः तोरिया एवं राई बोने का उपर्यक्त समय बुन्देलखण्ड एवं आगरा मण्डल में सितम्बर का अन्तिम सप्ताह तथा शेष में अक्टूबर का प्रथम पखवारा है। बुवाई देशी हल से पीछे उथले कूड़ों में 45 सेन्टीमीटर की दूरी पर करना चाहिए।

उर्वरक की मात्राः उर्वरक का प्रयोग मिट्टी परीक्षण की संस्तुतियों के आधार पर किया जाये सिंचित क्षेत्रों में तोरिया में नत्रजन 80 किग्रा., फास्फेट 40 किग्रा., पोटाश 40 किग्रा. एवं 30 किग्रा. गंधक प्रति हेक्टेयर तथा राई में नत्रजन 120 किग्रा., फास्फेट 60 किग्रा., पोटाश 60 किग्रा. एवं 40 किग्रा. गंधक प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करने से अच्छी उपज प्राप्त होती है। फास्फोरस का प्रयोग सिंगल सुपर फास्फेट के रूप में अधिक लाभदायक होता है तथा अच्छी उपज प्राप्त करने के लिये 60 कुन्तल प्रति हेक्टेयर की दर से सड़ी हुई गोबर की खाद का प्रयोग करना चाहिये। सिंचित क्षेत्रों में नत्रजन की आधी मात्रा व फास्फेट एवं पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई के समय कूड़ों में बीज के 2–3 सेमी. नीचे नाई या चोंगे से दिया जाये। नत्रजन की शेष मात्रा पहली सिंचाई के बाद टाप ड्रेसिंग में डाली जाये।

निराई–गुड़ाई विरलीकरण एवं खरपतवार नियंत्रणः बुवाई के 15–20 दिन के अन्दर घने पौधों को निकालकर उनकी आपसी दूरी 15 सेमी. कर देना आवश्यक है। खरपतवार नष्ट करने के लिये एक निराई, गुड़ाई, सिंचाई के पहले और दूसरी सिंचाई के बाद करनी चाहिये। रसायन द्वारा खरपतवार नियंत्रण करने पर बुवाई से पूर्व फलूक्लोरोलिन 45 ई.सी. 2.2 लीटर प्रति 800–1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव कर भली–भाँति हैरो चलाकर मिट्टी को मिला देना चाहिये। पैडीमिथिलीन 30 ई.सी. 3.3 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से बुवाई के दो तीन दिन के अन्दर 800–1000 लीटर पानी में घोलकर समान रूप से छिड़काव करें। यदि खरपतवारनाशी रसायन का प्रयोग न किया गया हो तो खुर्पी से निराई कर खरपतवार का नियंत्रण किया जाये।

सिंचाईः राई में नमी की कमी, फूल आने के समय तथा दाना भरने की अवस्थाओं में विशेष संवेदनशील होती है। अतः अच्छी उपज प्राप्त करने के लिये 02 सिंचाई क्रमशः पहली बुवाई के 30–35 दिनों के बाद तथा दूसरी वर्षा न होने पर 55–65 दिन बाद करें।

फसल सुरक्षाः

(क) प्रमुख कीटः

1. **आरा मक्खीः** इस कीट की सूड़ियाँ काले सिलेटी रंग की होती है जो पत्तियों को किनारों

से अथवा पत्तियों में छेद कर तेजी से खाती है। तीव्र प्रकोप की दशा में पूरा पौधा पत्ती विहिन हो जाता है।

2. **चित्रित बगः** इस कीट के शिशु एवं प्रौढ़ चमकीले, नारंगी एवं लाल रंग के चकत्ते युक्त होते है। शिशु एवं प्रौढ़ पत्तियों, शाखाओं, तनों, फूलों एवं फलियों का रस चूसते है। जिससे प्रभावित पत्तियाँ किनारों से सूखकर गिर जाती है। प्रभावित फलियों में दानें कम बनते है।

3. **बालदार सूड़ीः** सूड़ी काले एवं नारंगी रंग की होती है तथा पूरा शरीर बालों से ढका रहता है। सूड़ियाँ प्रारम्भ में झुण्ड में रहकर पत्तियों को खाती है तथा बाद में पूरे खेत में फैलकर पूरी पत्तियों को खाती है। तीव्र प्रकोप की दशा में पूरा पौधा पत्ती विहिन हो जाता है।

4. **माहूः** इस कीट के शिशु एवं प्रौढ़ पीलापन लिये हुये हरे रंग के होते है जो पौधों के कोमल तनों, पत्तियों, फूलों एवं नई फलियों के रस को चूसकर कमजोर कर देते है। माहू मधुस्राव करते है। जिस पर काली फफूँदी उग आती है जिससे प्रकाश संश्लेषण में बाधा उत्पन्न होती है।

5. **पत्ती सुरंगक कीटः** इस कीट की सूड़ियाँ पत्तियों में सुरंग बनाकर हरे भाग को खाती है जिसके फलस्वरूप पत्तियों में अनियमित आकार की सफेद रंग की रेखायें बन जाती है।

नियंत्रण के उपायः

1. आरामक्खी एवं बालदार सूड़ी के नियंत्रण के लिये मैलाथियान 5 प्रतिशत डी.पी.की. 20–25 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर बुरकाव अथवा मैलाथियान 50 प्रतिशत ई. सी. की 1.50 लीटर अथवा डाई क्लोरोवास 76 के प्रतिशत ई. सी. की 500 मिली. मात्रा अथवा क्यूनालफॉस 25 प्रतिशत ई.सी. की 1.25 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से लगभग 600–750 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिये।

2. माहू, चित्रित बग एवं पत्ती सुरंगक कीट के नियंत्रण के लिये डाईमेथोएट 30 प्रतिशत ई.सी. अथवा आक्सीडेमेटॉन मिथाइल 25 प्रतिशत ई.सी. अथवा क्लोरोपाइरीफास 20 प्रतिशत ई.सी. को 01 लीटर अथवा मोनाक्रोटोफास 36 प्रतिशत एस.एल. की 500 मिली. प्रति हेक्टेयर की दर से लगभग 600–750 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिये। एजाडिरेक्टिन 0.15 प्रतिशत ई.सी. को 2.5 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से भी प्रयोग किया जा सकता है।

ख) प्रमुख रोगः

1. **अल्टरनेरिया पत्ती धब्बाः** इस रोग में पत्तियों तथा फलियों पर गहरे कत्थई रंग के धब्बे बनते है जो गोल छल्ले के रूप में पत्तियों पर स्पष्ट दिखाई देते है। तीव्र प्रकोप की दशा में धब्बे आपस में मिल जाते है जिससे पूरी पत्ती झुलस जाती है।

2. **सफेद गेरूईः** इस रोग में पत्तियों की निचली सतह पर सफेद फफोले बनते है जिससे पत्तियाँ पीली होकर सूखने लगती है। फूल आने की अवस्था में पुष्पक्रम विकृत हो जाता है। जिससे कोई भी फली नहीं बनती है।

3. **तुलासिताः** इस रोग में पुरानी पत्तियों की ऊपरी सतह पर छोटे–छोटे धब्बे तथा पत्तियों की निचली सतह पर बड़े धब्बे दिखाई देते हैं।

अलसी की आधुनिक खेती

महक सिंह, नलिनी तिवारी, आर.के. यादव एवं पी.के. सिंह

अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग, चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कानपुर–208002

खेत की तैयारीः इसकी खेती मटियार व चिकनी दोमट भूमि में सफलता पूर्वक की जा सकती है। खरीफ की फसलें काटने के बाद खेत की पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करनी चाहिये, तत्पश्चात् कल्टीवेटर अथवा देशी हल से दो जुताई करके खेत अचछी तरह समतल कर लेना चाहिये।

बुवाई का समय एवं तिथिः अक्टूबर के अन्तिम सप्ताह से नवम्बर का प्रथम सप्ताह।

बीज दरः बीज उद्देशीय प्रजातियों के लिये 30 किग्रा./हे. तथा द्विउद्देशीय प्रजातियों के लिये 50 किग्रा./हे.।

बुवाई की दूरीः बीज उद्देशीय प्रजातियों के लिये 25 सेमी. कूड़ से कूड़ तथा द्विउद्देशीय प्रजातियों के लिये 20 सेमी. कूड़ से कूड़।

बीज शोधनः अलसी की फसल में झुलसा तथा उकठा आदि का संक्रमण प्रारम्भ में बीज या भूमि अथवा दोनों से होता है, जिनसे बचाव हेतु बीज को 2.5 ग्राम थीरम या 2 ग्राम कार्बेन्डाजिम

अलसी की उन्नतशील प्रजातियाँ

क्रम सं.	प्रजातियाँ	विमोचन वर्ष	पकने की अवधि (दिनो में)	उपज (कु./हे.) सिंचित	तेल का प्रतिशत	विशेष विवरण
(क) बीज उद्देशीय						
1	आजाद प्रज्ञा	2023	125–130	20–22	34–36	सम्पूर्ण उ.प्र. गेरूई/रतुआ अवरोधी तथा उक्ठा सहनशील मैदानी क्षेत्रों हेतु
2	अनु (असिंचित)	2024	130–135	10–12	34–36	सम्पूर्ण उ.प्र.
3	शुभ्रा	1985	130–135	20–22	43–45	सम्पूर्ण उ.प्र. (गेरूई/रतुआ अवरोधी तथा उक्ठा व काली मक्खी अवरोधी)
4	लक्ष्मी–27	1987	115–120	15–18	43–45	बुन्देलखण्ड हेतु संस्तुत (गेरूई/रतुआ अवरोधी)
5	पद्मिनी	1999	120–125	15–18	43–45	बुन्देलखण्ड हेतु संस्तुत (फफूँदी रोग अवरोधी)
6	शेखर	2001	135–140	20–25	43–43	मैदानी क्षेत्रों हेतु उपर्युक्त
7	शारदा	2006	105–110	16–18	43–45	सफेद बुकनी अवरोधी
8	मऊ आजाद अलसी–1	2008	120–125	16–18	43–45	(झुलसा अवरोधी)
9	जे.एल.एस.–95	2018	125–130	12–14	–	सम्पूर्ण उ.प्र.
10	यूटेरा अलसी (आर.एल.सी.–153)	2019	125–135	12–15	–	सम्पूर्ण उ.प्र.
11	राजन (एल.सी.के.–1009)	2019	130–133	15–18	–	(अल्टरनेरिया ब्लाइट एवं रस्ट अवरोधी)
अलसी की समय से बुवाई के लिये प्रजातियाँ						
12	उमा (एल.के.–1101)	2017	120–123	9–10	–	(अल्टरनेरिया ब्लाइट एवं विल्ट के प्रति मध्यम अवरोधी, बड फ्लाई कीट के लिये सहिष्णु)
13	इन्दू (एल.सी.के.–1108)	2017	135–137	9–10	–	(अल्टरनेरिया ब्लाइट, पाउडरी मिल्डयू एवं रस्ट के प्रति अवरोधी)
14	उत्तेरा अलसी–2	2019	130–135	12–15	–	सम्पूर्ण उ.प्र.
15	राजन (एल.सी.के.–1009)	2019	133	15–16	36–39	(अल्टरनेरिया ब्लाइट एवं रस्ट अवरोधी)
16	कोटा अलसी–6 (आर.एल.–13165)	2020	130–135	11.77	35–38	पाउडरी मिल्डयू रस्ट के प्रति अवरोधी)

(क) द्विउद्देशीय							
1	गौरव	1987	135–150	18–20	रेशा 12–14	42–43	मैदानी क्षेत्रों हेतु उपर्युक्त
2	शिखा	1997	135–150	20–22	रेशा 13–15	42–41	मैदानी क्षेत्रों हेतु उपर्युक्त
3	रश्मि	1999	135–140	20–24	रेशा 14–15	41–42	मैदानी क्षेत्रों हेतु उपर्युक्त
4	पार्वती	2001	140–145	20–22	रेशा 13–14	41–42	बुन्देलखण्ड हेतु संस्तुत (उकठा, गेरूई/रतुआ व फफूँदी चूर्ण रोग अवरोधी)
5	रूचि	2011	132–135	22–25	रेशा 15–16	40–42	समस्त उ.प्र. हेतु संस्तुत (उकठा, गेरूई/रतुआ व फफूँदी चूर्ण रोग अवरोधी)

से प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचार करके बोना चाहिये।

उर्वरक की मात्राः असिंचित क्षेत्र के लिये अच्छी उपज प्राप्ति हेतु नत्रजन 50 किग्रा., फास्फोरस 40 किग्रा., पोटाश 40 किग्रा. की दर से तथा सिंचित क्षेत्रों में नत्रजन 100 किग्रा., फास्फोरस 60 किग्रा., पोटाश 40 किग्रा. प्रति/हे. की दर से प्रयोग करें। असिंचित दशा में नत्रजन, फास्फोरस एवं पोटाश की सम्पूर्ण मात्रा तथा सिंचित दशा में नत्रजन की आधी मात्रा व फास्फोरस की पूरी मात्रा बुवाई के समय चोंगे द्वारा 2–3 सेमी. नीचे प्रयोग करें। सिंचित दशा में नत्रजन की शेष आधी मात्रा टाप ड्रेसिंग के रूप में प्रथम सिंचाई के बाद प्रयोग करें। फास्फोरस के लिये सुपर फास्फेट का प्रयोग अधिक लाभप्रद है।

सिंचाईः यह फसल प्रायः असिंचित रूप में बोयी जाती है परन्तु जहाँ सिंचाई का साधन उपलब्ध है वहाँ दो सिंचाई पहली फूल आने के समय तथा दूसरी दाना बनते समय करने से उपज में बढ़ोत्तरी होती है।

फसल सुरक्षाः

(क) प्रमुख कीटः

1. **गालमिजः** इस कीट का मैगेट फसल की खिलती कलियों के अन्दर पुंकेसर को खाकर नुकसान पहुँचाता है। जिससे फलियों में दाने नहीं बनते है।
2. **बालदार सूड़ीः** सूड़ी काले रंग की होती है तथा पूरा शरीर बालों से ढका रहता है। सूड़ियाँ प्रारम्भ में झुण्ड में रहकर पत्तियों को खाती है तथा बाद में पूरे खेत में फैलकर पूरी पत्तियों को खाती है। तीव्र प्रकोप की दशा में पूरा पौधा पत्ती विहिन हो जाता है।

नियंत्रण के उपायः

1 गर्मी में गहरी जुताई करना चाहिये।

2 संतुलित उर्वरकों का प्रयोग करना चाहिये।

3 गालमिज के नियंत्रण हेतु अवरोधी प्रजातियों जैसे नीलम, गरिमा, श्वेता आदि की बुवाई करनी चाहिये।

4 अक्टूबर के तीसरे सप्ताह तक बुवाई करने से गालमिज का प्रकोप कम होता है।

5 चना, राई–सरसों एवं कुसुम के साथ सहफसली खेती करने से गालमिज का प्रकोप कम हो जाता है।

6 यदि कीट का प्रकोप आर्थिक क्षति स्तर पार कर गया हो तो निम्नलिखित कीटनाशकों का प्रयोग करना चाहिये।

7 गालमिज के नियंत्रण हेतु आक्सीडेमेटॉन– मिथाइल 25 प्रतिशत ई.सी. की 01 लीटर अथवा मोनोक्रोटोफास 36 प्रतिशत एस.एल.की 600–750 लीटर पानी में घोलकर प्रति/हे. छिड़काव करना चाहिये।

8 बालदार सूड़ी के नियंत्रण के लिये मैलाथियान 05 प्रतिशत डी.पी.की. 20–25 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर बुरकाव अथवा मैलाथियान 50 प्रतिशत ई.सी. की 1.50 लीटर अथवा क्यूनालफास 25 प्रतिशत ई.सी. की 1.25 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से लगभग 600–750 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिये।

ख) प्रमुख रोगः

1. **उकठाः** रोगग्रस्त पौधों की पत्तियां नीचे से ऊपर की ओर पीली पड़ने लगती है तथा बाद में पूरा पौधा सूख जाता है।
2. **अल्टरनेरिया पत्ती धब्बाः** इस रोग में पत्तियों की ऊपरी सतह पर गहरे कत्थई रंग के धब्बे बनते हैं जो गोल छल्ले के रूप में पत्तियों पर स्पष्ट दिखाई देते हैं। तीव्र प्रकोप की दशा में धब्बे आपस में मिल जाते है जिससे

पूरी पत्ती झुलस जाती है। यह रोग तने, शाखाओं एवं फलियों को भी प्रभावित करता है। तीव्र प्रकोप की दशा में फलियां काली होकर मर जाती है।

3. **गेरूई:** इस रोग में पत्तियों, पुष्पक्रमों तथा तनें पर नारंगी रंग के फफोले बनते हैं जिससे पत्तियाँ पीली होकर सूखने लगती है।

4. **बुकनी रोग:** इस रोग में पत्तियों पर सफेद चूर्ण दिखाई देते हैं जिससे बाद में पत्तियाँ सूख जाती है।

नियंत्रण के उपाय:

1) बीज उपचार:

1 उकठा रोग के नियंत्रण हेतु ट्राइकोडर्मा विरिडी एक प्रतिशत/ट्राइकोडर्मा हारजिएनम 02 प्रतिशत डब्लू.पी. की 4.0 ग्राम प्रति किग्रा. बीज की दर से बीज शोधन कर बुवाई करना चाहिये।

2 अल्टरनेरिया पत्ती धब्बा रोग के नियंत्रण हेतु थीरम 75 प्रतिशत डब्लू.एस. की 2.5 ग्राम प्रति किग्रा. बीज की दर से बीज शोधन कर बुवाई करना चाहिये।

2) भूमि उपचार:

1. भूमि जनित एवं बीज जनित रोगों के नियंत्रण हेतु बायोपेस्टीसाइड (जैव कवक नाशी) ट्राइकोडर्मा विरिडी 01 प्रतिशत डब्लू.पी. अथवा ट्राइकोडर्मा हारिजिएनम 02 प्रतिशत डब्लू.पी. की 2.5 ग्राम प्रति हेक्टेयर 60–75 किग्रा. सड़ी हुई गोबर की खाद मिलाकर हल्के पानी का छींटा देकर 8–10 दिन तक छाया में रखने के उपरान्त बुवाई के पूर्व आखिरी जुताई पर भूमि में मिला देने से अलसी के बीज/भूमि जनित आदि रोगों के प्रबन्धन में सहायक होता है।

3) पर्णीय उपचार:

1. अल्टरनेरिया पत्ती धब्बा एवं गेरूई रोग के नियंत्रण हेतु मैनकोजेब 75 प्रतिशत डब्लू.पी. की 2.0 किग्रा./हे. लगभग 600–750 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिये।

2. बुकनी रोग के नियंत्रण हेतु घुलनशील गंधक 80 प्रतिशत डब्लू.पी. की 2.50 किग्रा./हे. लगभग 600–750 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिये।

ग) प्रमुख खरपतवार:

बथुआ, सेन्जी, कृष्णनील, हिरनखुरी, चटरी–मटरी, अकरा–अकरी जंगली गाजर, गाजर, प्याजी, खरतुआ, सत्यानाशी आदि।

नियंत्रण के उपाय:

खरपतवार नियंत्रण हेतु पेण्डीमेथिलीन 30 प्रतिशत ई.सी. की 3.30 ली./हे. लगभग 800–1000 लीटर पानी में घोलकर फ्लैट फैन नॉजिल से बुवाई के 02–03 दिन के अन्दर समान रूप से छिड़काव करें।

सतत् उत्पादन हेतु एकीकृत पोषक तत्व प्रबन्धन

अरविन्द कुमार, चन्द्रकला यादव, वी.के. कनौजिया, अमर सिंह एवं रवि प्रताप

चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कानपुर–208002

प्रारम्भ में जब रासायानिक उर्वरक उपलब्ध नहीं थे खेती में जैविक खादों का प्रयोग मुख्य रूप से किया जाता था जिससे कृषि उत्पादन अपेक्षित स्तर तक नहीं पहुंच पाता था परन्तु 60 के दशक में हरित क्रान्ति के उद्भव के उपरान्त उर्वरकों का प्रयोग धीरे–धीरे बढ़ता गया जिससे उत्पादन में आशातीत वृद्धि हुई। प्रारम्भ में प्रमुख पोषक तत्वों में केवल नत्रजनिक उर्वरकों का प्रयोग हुआ लेकिन धीरे–धीरे फास्फेटिक एवं पोटेशिक उर्वरकों के महत्व को समझते हुए इनका प्रयोग भी होने लगा परन्तु अन्य आवश्यक पोषक तत्वों जैसे मैग्नीशियम, सल्फर, जिंक, आयरन, कापर, मैग्नीज, मालिब्डेंनम, बोरान एवं क्लोरीन की मिट्टी में कमी होती रही, फलस्वरूप इन तत्वों की पौधों को आवश्यकतानुसार उपलब्धता न होने से अधिकांश क्षेत्रों में उत्पादन में ठहराव आ गया तथा उत्पादन में कमी भी देखी गयी। मृदा के जीवान्श में हो रहे लगातार ह्रास से मृदा में भौतिक, रासायनिक एवं जैविक क्रियाओं में इस प्रकार परिवर्तन हुआ कि देश की बढ़ती आबादी के सापेक्ष खाद्यान्नोत्पादन पर प्रश्नचिन्ह लग गया है। गोबर की खाद/हरी खाद या गेहूँ के भूसे द्वारा कुल पोषक तत्वों के 50 से 75 प्रतिशत आपूर्ति से फसल प्रणाली की उपज में वृद्धि होती है तथा उर्वरता बनी रहती है।

तत्व प्रबन्धन का मूल सिद्धान्त

मृदा उर्वरता का संतुलन इस प्रकार किया जाय कि फसल की मांग एवं आवश्यकता के अनुसार पौधों को आवश्यक पोषक तत्व उपलब्ध होते रहें, जिससे अधिक से अधिक (वांछित) उपज मिल सके और मृदा स्वास्थ्य सुरक्षित बना रहे। इसके लिए आवश्यकतानुसार अकार्बनिक एवं कार्बनिक स्रोतों से फसल को सभी तत्वों का निश्चित अनुपात में ग्रहण करना आवश्यक है। क्योंकि प्रत्येक तत्व का पौधों के अन्दर अलग–अलग कार्य एवं महत्व है जो विभिन्न अवस्थाओं में पूर्ण होता है। कोई एक तत्व दूसरे तत्व का पूरक नहीं है। यह संतुलन बिगड़ने पर उत्पादन सीधे प्रभावित होता है। इस व्यवस्था/तकनीकी को एकीकृत पोषक तत्व प्रबन्धन की संज्ञा दी गयी है।

एकीकृत पोषक तत्व प्रबन्धन हेतु कुछ सुझावः

1. मिट्टी परीक्षण के आधार पर ही उर्वरकों एवं जैविक खादों का प्रयोग करें।
2. दलहनी फसलों में राइजोबियम कल्चर का प्रयोग अवश्य करें।
3. धान व गेंहूँ के फसल चक्र में ढैंचे की हरी खाद का प्रयोग करें।
4. फसल चक्र में परिवर्तन करें।
5. आवश्यकतानुसार उपलब्धता के आधार पर गोबर तथा कूड़ा करकट का प्रयोग कर कम्पोस्ट बनाई जाये।
6. खेत में फसलावशिष्ट जैविक पदार्थों को मिट्टी में मिला दिया जाय।
7. विभिन्न प्रकार के जैव उर्वरकों तथा नत्रजनिक सैस्लेषी, फास्फेट को घुलनशील बनाने वाले बैक्टीरियल अल्गल तथा फंगल बायोफर्टिलाइजर का प्रयोग करें।
8. कार्बनिक जीवांश तथा अकार्बनिक उर्वरकों का संतुलित उपयोग करें।

कृषि में एकीकृत तत्व प्रबन्धन से लाभः

1. अधिकतम पैदावार प्राप्त करना।
2. पोषक तत्वों को बर्बादी से बचाना।
3. विषैलापन तथा प्रतिक्रिया से बचाना, किसी एक तत्व की अधिकता भी विषैलापन पैदा करती है।
4. मृदा की उत्पादकता एवं स्वस्थ बनाये रखना।
5. गुणात्मक उत्पादन।
6. वातावरण की विपरीत परिस्थितियों से बचाव।
7. कीड़े मकोड़ों के प्रभाव को प्राकृतिक तौर पर कम करना।
8. लाभ/लागत अनुपात में वृद्धि।

जैविक खादों तथा जैव उर्वरकों द्वारा उर्वरकों के समतुल्य पोषक तत्व :

सामग्री	निवेश की मात्रा	उर्वरकों के रूप में पोषक तत्वों की समतुल्य मात्रा
(क) जैविक खादें/फसल अवशेष– गोवर की खाद	प्रति टन	3.6 किग्रा. नाइट्रोजन फास्फोरस + पोटाश (2:1:1)
ढैंचा की हरी खाद	45 दिन की फसल	50–60 किग्रा. नाइट्रोजन (बौनी जाति के धान में)
गन्नें की खोई	5 टन प्रति हे.	12 किग्रा. नाइट्रोजन प्रति टन
धान का पुआल + जलकुम्भी	5 टन प्रति हे.	20 किग्रा. नाइट्रोजन प्रति टन
(ख) जैव उर्वरक		
राइजोबियमकल्चर एजेटोबेक्टर		19–22 किग्रा. नाइट्रोजन
एजोस्पिरिलम		20 किग्रा. नाइट्रोजन
नील हरित शैवाल	10 किग्रा. प्रति हें.	20–30 किग्रा. नाइट्रोजन
एजोला	6–21 टन प्रति हे.	3–5 किग्रा. प्रति हे.

जैविक खादों में पोषक तत्व की प्रतिशत मात्रा

खाद का नाम	**नत्रजन %**	**फास्फोरस %**	**पोटाश %**
गोबर की खाद	0.5	0.25	0.5
कम्पोस्ट खाद (बिछावन से)	0.5	0.15	0.5
कम्पोस्ट खाद (बायो गैस से तैयार)	1.2–2.0	1.1–2.0	0.8–1.0
मुर्गी बीट	3.8	1.5	1.7
खून की खाद	11.0	1.5	–
भेंड़, बकरी की मैंगनी	0.7	0.51	1.8
प्रेसमड	1.9	2.8	0.9
वर्मी कम्पोस्ट	1.2–1.6	1.8–2.0	0.5–0.75
मूँगफली की खली	7.3	1.5	1.3
अण्डी की खली	4.3	1.8	1.3
सरसों की खली	5.2	1.8	1.2
महुआ की खली	2.5	0.8	1.8
नीम की खली	5.2	1.0	1.4

टमाटर, बैंगन एवं मिर्च का नर्सरी प्रबंधन

डॉ. राजीव, कृष्ण कुमार, अंकिता तिवारी एवं विनीत धीर

चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर–208002

सब्जियों का सफल उत्पादन मुख्यतः बीजों और उनसे प्राप्त पौधों पर निर्भर करता है। उच्च गुणवत्ता वाले, स्वस्थ बीजों का उपयोग करने से किसान वांछित संख्या में रोग मुक्त पौधे पैदा कर सकते हैं। व्यावसायिक सब्जी की खेती के लिए, बीज स्वस्थ, शुद्ध और उन्नत किस्म के होने चाहिए। कृषि/बागवानी विभाग, राष्ट्रीय बीज निगम, राष्ट्रीय बीज विकास निगम, कृषि विश्वविद्यालय या भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद जैसे प्रतिष्ठित संस्थान से ही खरीदें। नर्सरी एक ऐसी सुविधा है जिसे बीजों से पौधों की खेती के लिए डिजाइन किया गया है। टमाटर, बैंगन और मिर्च, की किस्मों जैसे सब्जियों के बीज जिन्हें दूसरी जगह लगाया जा सकता है, उन्हें थोड़े समय के लिए उच्च घनत्व वाले कॉम्पैक्ट क्षेत्र में बोया जाता है। वर्तमान में, जड़ वाली सब्जियों के पौधे उगाए और रोपे जाते हैं। नर्सरी का सीमित आकार किफायती और सरल रखरखाव की सुविधा देता है, इसलिए प्रतिकूल परिस्थितियों में भी स्वस्थ और पर्याप्त मात्रा में पौधों की खेती को सक्षम बनाता है।

नर्सरी के लिए जगह चुनना

- नर्सरी की जगह हल्की, जैविक पदार्थ से भरपूर मिट्टी होनी चाहिए जो उपजाऊ और भुरभुरी हो।
- अम्लीय या क्षारीय मिट्टी न चुनें।
- पर्याप्त जल निकासी और सिंचाई सुविधाओं तक आसान पहुँच वाली ऊँची जगह चुनें। बेहतरीन नतीजों के लिए, पूरे दिन भरपूर धूप वाली खुली जगह चुनें। इसके अलावा, सुनिश्चित करें कि वह जगह कुत्तों और गिलहरियों जैसे जंगली जानवरों से मुक्त हो।
- हर साल नर्सरी की जगह बदलें।

सब्जियों का उनके आधार पर नर्सरी वर्गीकरण

टमाटर

एक हेक्टेयर भूमि पर पौध उगाने के लिए लगभग 225 वर्ग मीटर का शुद्ध क्षेत्र आवश्यक हो सकता है। नर्सरी बेड आमतौर पर 7.5 मीटर लंबाई, 1.00 मीटर चौड़ाई और 10 से 15 सेंटीमीटर की ऊंचाई के आयामों के साथ तैयार किए जाते हैं। अच्छी तरह से विघटित गोबर की खाद को लगभग 3 किलोग्राम प्रति वर्ग मीटर की दर से क्यारी की ऊपरी मिट्टी में अच्छी तरह मिला देना चाहिए। 15:15:15 के अनुपात में 0.5 किलोग्राम एनपीके का उर्वरक मिश्रण बीज बोने से कम से कम 10 दिन पहले मिट्टी में मिलाया जाता है। आमतौर पर, एक हेक्टेयर भूमि पर रोपण करते समय खुले परागण वाली किस्मों के लिए 400–500 ग्राम बीज की आवश्यकता होती है, जबकि संकर किस्मों के लिए 125–175 ग्राम की आवश्यकता होती है। स्वस्थ पौध की खेती के लिए 25 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से कैप्टान, सेरेसन या थीरम जैसे कवकनाशी के साथ बीजों का उपचार आवश्यक है। इसी तरह, बीज क्यारियों को भाप या 0.5 लीटर 40 प्रतिशत फॉर्मेलिन प्रति वर्ग मीटर मिट्टी से उपचारित किया जाता है। धूम्रीकरण के बाद, क्यारियों को 24 घंटे की अवधि के लिए पॉलीथीन से ढक दिया जाता है। नर्सरी क्यारी में धूम्रीकरण की अनुपस्थिति में, कीटों और बीमारियों के प्रकोप को कम करने के लिए सौरीकरण को लागू किया जाना चाहिए। सौरीकरण प्राप्त करने के लिए, नर्सरी क्यारी को दिन के उजाले के दौरान 10 दिनों की अवधि के लिए पारदर्शी प्लास्टिक शीट से ढक दें। यदि क्यारियों को जीवाणुरहित नहीं किया गया है, तो 0.2 प्रतिशत ब्रैसिकोल या कैप्टन का छिड़काव करें। बीजों को या तो बिखेर कर या पंक्तियों में, पंक्तियों के बीच 7.5 सेमी की दूरी बनाए रखते हुए क्यारियों में बोया जाता है। बुवाई के बाद, पंक्तियों को खाद की एक पतली परत से ढक दिया जाता है। पारंपरिक तरीकों की तुलना में कम सुरंगों के रूप में पारदर्शी प्लास्टिक शीट का उपयोग पौधों की सफल खेती के लिए इष्टतम स्थितियाँ बनाता है। सर्दियों के महीनों के दौरान पौध की खेती के लिए कम लागत वाले पॉलीहाउस का उपयोग मैदानी इलाकों में बसंत रोपण के लिए समय पर रोपाई को सक्षम बनाता है। एग्रोनेट्स कीटों से पौधों की रक्षा करने और वेक्टर–जनित वायरस और अन्य कीटों के कारण होने वाले संक्रमण और क्षति को कम करने का काम करते हैं। बीज के अंकुरण होने तक क्यारियों को

पुआल या पॉलीथीन शीट से ढक दिया जाता है। पोस्ट–इमर्जेंस डैम्पिंग ऑफ को कम करने के लिए डायथेन एम 45 या डिफोलेशन 0.25 प्रतिशत पर कवकनाशी का साप्ताहिक छिड़काव करने की सलाह दी जाती है।

बैंगन

बीजों को सावधानीपूर्वक बनाए गए नर्सरी बेड में लगाया जाता है, जिसकी ऊंचाई 20 से 25 सेमी होती है, बीच–बीच में पानी की नालियाँ बनी होती हैं। बुवाई से कई दिन पहले पर्याप्त मात्रा में बारीक सड़ी हुई गोबर की खाद (FYM) या कम्पोस्ट को नर्सरी की मिट्टी में अच्छी तरह से मिला दिया जाता है। FYM/कम्पोस्ट में सिंगल सुपरफॉस्फेट और म्यूरेट ऑफ पोटाश की उचित मात्रा मिलाई जाती है। रोपण से एक या दो दिन पहले, नर्सरी बेड को डैम्पिंग–ऑफ रोग की शुरुआत को रोकने के लिए कैप्टन सस्पेंशन से पूरी तरह से संतृप्त किया जाना चाहिए। बुवाई के बाद मिट्टी को ढकने के लिए गेहूँ के भूसे, लंबी सूखी घास या वैकल्पिक मल्चिंग सामग्री का उपयोग किया जाना चाहिए जब तक कि बीज अंकुरित न हो जाए। एक हेक्टेयर भूमि को कवर करने के लिए दो सौ से तीन सौ ग्राम बीज पर्याप्त होते हैं, जिसके परिणाम स्वरूप 30,000 से 45,000 पौधे प्राप्त होते हैं।

मिर्च

स्वस्थ पौध उगाने के लिए प्रभावी नर्सरी प्रबंधन आवश्यक है, क्योंकि मिर्च और शिमला मिर्च को अक्सर रोपाई वाली फसलों के रूप में उगाया जाता है। कहावत 'जैसा बोओगे वैसा पाओगे' इस बात पर जोर देती है कि शिमला मिर्च की सफल फसल पैदा करने के लिए मजबूत पौध उगाना आवश्यक है। उच्च गुणवत्ता वाले पौध उगाना अधिक उपज प्राप्त करने के लिए महत्वपूर्ण कम लागत वाला इनपुट है। स्वस्थ पौध पैदा करने के लिए उच्च गुणवत्ता वाले बीज आवश्यक हैं। इसलिए, मजबूत पौधों के स्वस्थ फलों से बीजों की कटाई करनी चाहिए। पहले काटे गए स्वस्थ फलों से प्राप्त बीजों में उच्च अंकुरण प्रतिशत देखा गया है। बीज निकालने के लिए फली को स्टोर करना निकाले गए बीजों को स्टोर करने से अधिक फायदेमंद है। बीजों को हथेलियों के बीच धीरे से रगड़कर और उसके बाद पानी से धोकर उनके तीखेपन को कम करने की सलाह दी जाती है। तीखेपन में कमी से अंकुरण को बढ़ावा मिलता है और बीजों पर चींटियों के शिकार का खतरा कम होता है। एक हेक्टेयर भूमि पर पौध उगाने के लिए लगभग 450–500 ग्राम बीज की आवश्यकता होती है, तथा इन बीजों को फैलाने के लिए 3 मीटर लंबी तथा 1.2 मीटर चौड़ी 12–15 नर्सरी की आवश्यकता होती है। इन क्यारियों से लगभग 50,000 से 60,000 पौधे प्राप्त हो सकते हैं, जो एक हेक्टेयर भूमि को कवर करने के लिए पर्याप्त हैं। खेत की खाद तथा नीम की खली को व्यापक रूप से शामिल करने के पश्चात क्यारियों को अच्छी तरह से जोतना चाहिए। निवारक उपायों के लिए अनुशंसित पौध संरक्षण क्रियाओं के कार्यान्वयन की आवश्यकता होती है। अंकुरण को बढ़ाने के लिए, क्यारियों को अंकुरण पूर्ण होने तक सूखी घास से ढकने की सलाह दी जाती है। रोज कैन या माइक्रो स्प्रिंकलर का उपयोग करके सुबह और रात में नियमित रूप से हल्की सिंचाई करना महत्वपूर्ण है। स्वस्थ पौध को बढ़ावा देने के लिए, नर्सरी को वायरस–वाहक वैक्टर द्वारा खिलाए जाने से बचाने के लिए 40 मेश नायलॉन जाल से ढकने की सलाह दी जाती है, या वैकल्पिक रूप से, पौधों को जालीदार पॉलीहाउस के भीतर उगाया जा सकता है। नर्सरी में पौधों को लगभग 40 से 50 दिनों तक रहने दिया जा सकता है। रोपाई से लगभग 10 दिन पहले शिमला मिर्च और मिर्च के पौधों की छंटाई करने से रोपाई की गई पौध की स्थापना में सुधार होता है और सहायक कलियों के निर्माण को बढ़ावा मिलता है, जिससे शाखाओं में वृद्धि होती है। नर्सरी में पानी की आपूर्ति को समायोजित करके रोपाई से एक सप्ताह पहले पौध को सख्त करना शुरू कर देना चाहिए।

किस्मों का चयन

सब्जियां तथा उनकी किस्मों का चयन मृदा के प्रकार एवं उसकी गुणवत्ता तथा जलवायु के आधार पर करना चाहिये। कुछ सब्जियों की उन्नत किस्में सारणी–1 में दी गई हैं।

सारणी 1. विभिन्न सब्जियों की उन्नत किस्में

1. टमाटर	आजाद टी–6, आजाद टी–5, वैशाली, रूपाली, पूसा रूबी, पूसा अर्ली ड्वार्फ, पूसा 120, अर्का मेघाली, अर्का सौरभ, अर्का आशीष, अर्का आभा, अर्का आलोक अर्का विशाल
2. बैंगन	आजाद बी–3, आजाद क्रांति, पूसा क्रांति, पूसा अनुपम पूसा भैरव, पूसा बिंदु, उषा उत्तम, पंत ऋतुराज प्रगति, पंजाब नीलम
3. मिर्च	आजाद मिर्च–1, आजाद मिर्च–2, सीएच 1, सीएच 3, अर्का स्वेता, अर्का मेघना, अर्का हरिता, काशी सुर्ख, काशी तेज, काशी आभा

रोपण से पूर्व पौधों की जड़ों का उपचार

पौधशाला से रोप निकालने के पश्चात उसकी जड़ को उपचारित

करने के लिए 10 ग्राम बाविस्टीन को 10 लीटर पानी में घोलकर तैयार कर लें। तैयार घोल में रोपड़ पौध की जड़ को 10 मिनट तक डुबाकर रखें। इसके बाद खेत में लगाने के लिए प्रयोग करें।

उपचारित पौध का रोपण

- पौध उपचार के तुरन्त बाद खेत में लगायें।
- कद्दूवर्गीय सब्जियों के रोप को, जहां तक संभव हो, मेड़ बनाकर मेड़ के किनारे पर लगायें। गर्मियों में रोपड़ पौध लगाने के पूर्व एवं रोपाई बाद सिंचाई अवश्य करें।
- वर्षा ऋतु में रोपण के बाद अवश्यकतानुसार सिंचाई करें। खेत में अनावश्यक पानी का भराव न होने दे।

पौध तैयार करने के लाभ –

- नर्सरी अंकुरण और उसके बाद के विकास को सुविधाजनक बनाने के लिए पौधों के लिए इष्टतम परिस्थितियाँ बनाती है।
- रोगजनक संक्रमणों, कीटों और खरपतवारों के खिलाफ सीमित स्थान में नर्सरी की आसान निगरानी के कारण युवा पौधों की बेहतर देखभाल।
- नर्सरी द्वारा उगाई गई फसलें जल्दी पक जाती हैं और उनका बाजार मूल्य अधिक होता है, जिससे आर्थिक लाभप्रदता बढ़ जाती है।
- भूमि और श्रम की बचत होती है क्योंकि प्राथमिक क्षेत्र का उपयोग फसल द्वारा कम अवधि के लिए किया जाएगा परिणाम स्वरूप, गहन फसल चक्र अक्सर लागू किए जाते हैं।
- नर्सरी की अलग–अलग खेती हमें मुख्य क्षेत्र तैयार करने के लिए अधिक समय देती है।
- सब्जी के बीजों, विशेष रूप से संकर की उच्च लागत को देखते हुए, उन्हें नर्सरी में उगाने से खर्च कम किया जा सकता है।

गोभी वर्गीय सब्जियों में नाशीजीव प्रबंधन

डा. अभिमन्यु यादव एवं डा. संजय कुमार

चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर–208002

सब्जियों में गोभीवर्गीय सब्जियों का अपना ही महत्व हैं। ये सब्जियाँ व्यावसायिक, व्यावहारिक एवं स्वास्थ्य की दृष्टि से बहुत ही महत्वपूर्ण हैं। भारतवर्ष के मैदानी भागों में ये सब्जियाँ मुख्य रूप से शरद् ऋतु में उगायी जाती हैं। इस वर्ग की सब्जियों में फूलगोभी, पत्तागोभी, एवं ब्रोकली आदि प्रमुख हैं। गोभीवर्गीय सब्जियों से हमें पर्याप्त मात्रा में विभिन्न विटामिन जैसे विटामिन ए तथा सी एवं खनिज पदार्थ जैसे फास्फोरस, पौटैशियम, कैल्शियम, सोडियम, तथा लौह तत्व प्राप्त होते हैं। प्रयोगों द्वारा यह पाया गया हैं कि गोभीवर्गीय सब्जियों में पाये जाने वाले प्रतिरोधी तत्व हमारे शरीर को कैंसर से लड़ने में भी मदद करते हैं। व्यावसायिक दृष्टि से गोभीवर्गीय सब्जियाँ अपना अलग ही महत्व रखती हैं लेकिन कुछ कारणों से इनकी उत्पादकता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा हैं, जिसमें लगने वाले कीट एवं बीमारियाँ मुख्य हैं। इन कीटों एवं बीमारियों का नियंत्रण करके हम गोभीवर्गीय सब्जियों में लगने वाले प्रमुख कीटों में हीरक पृष्ठ कीट, माहू, गोभी छेदक, सफेद तितली तथा पर्ण भक्षी सूंड़ी आदि प्रमुख हैं। जबकि रोगों में आर्द्रगलन, मृदुरोमिल आसिता, अल्टरनेरिया पर्णदाग, सफेद गलन एवं जीवाणु काला गलन प्रमुख हैं।

उपरोक्त नाशीजीवों के प्रबन्धन के द्वारा किसान उन्नत गोभीवर्गीय सब्जियों का उत्पादन सफलतापूर्वक सम्पन्न कर सकते हैं।

प्रमुख कीट

हीरक पृष्ठ कीट– इस कीट के वयस्क का रंग धूसर होता हैं। जब यह बैठता हैं, तो इसकी पीठ पर तीन हीरे की तरह चमकीले चिन्ह दिखाई देते हैं, इसलिये इसको हीकर पृष्ठ कीट के नाम से जाना जाता हैं। कीट के पिछले पंखों पर लम्बे–लम्बे बालों की धारियाँ पायी जाती हैं। सूंड़ी का रंग पीलापन लिए हुए होता हैं। पूर्णरूप से विकसित सूंड़ी की लम्बाई 8 मि.मी. होती हैं। इस कीट का प्रकोप पत्तागोभी की फसल पर सबसे ज्यादा होता हैं। सूंड़ी पत्तियों की निचली सतह पर खाती हैं और छोटे–छोटे छिद्र बना देती हैं। जब इनका प्रकोप अधिक होता हैं तो छोटे पौधों की पत्तियाँ बिल्कुल समाप्त हो जाती हैं। जिससे पौधे मर जाते हैं। शुरूआती अवस्था में जब गोभी इस कीट से ग्रसित होती हैं तो बढ़वार पूरी तरह रूक जाती हैं।

प्रबन्धन

1. हर 25 लाइन गोभी के दोनों तरफ दो लाइन सरसों की बुवाई (पहली लाइन मुख्य फसल की रोपाई के 15 दिन पहले एवं दूसरी लाइन रोपाई के 15 दिन बाद) करना चाहिए जिससे इस कीट का प्रौढ़ आकर्षित होकर सरसों पर अण्डा देते हैं। सरसों में डाइक्लोरोवास (0.05%) घोल का छिड़काव करने से कीट मर जाते हैं।
2. जैव नाशी दवा बी.टी. (बैसिलस थुर्रिजियेन्सस) फार्मुलेशन 500 ग्राम प्रति हैक्टेयर का 10 दिन अन्तराल पर दो बार छिड़काव करने से इस कीट का नियंत्रण किया जा सकता हैं।
3. इस कीट के नियंत्रण के लिए मैलाथियान (0.07 प्रतिशत) घोल या कारटाप हाईड्रोक्लोराइड (0.05 प्रतिशत) के घोल का छिड़काव करना चाहिए।
4. नीम की गिरी का निचोड़ (4 प्रतिशत) फसल पर छिड़कने से इस कीट का प्रकोप कम हो जाता हैं।

माहू– ये गोभी के पत्तों पर हजारों की संख्या में चिपके रहते हैं। इस कीट का प्रकोप जनवरी व फरवरी में अधिक होता हैं जिससे पत्तियाँ पीली पड़ जाती हैं। माँहू अपने शरीर से स्राव करते हैं जिसमें फफूँद का आक्रमण होता हैं एवं गोभी खाने या बिकने योग्य नहीं रहती हैं। यह कीट हल्के पीले रंग का होता हैं। वयस्क पंखदार एवं पंखरहित दोनों प्रकार के पाए जाते हैं। यह कीट हमेशा चूर्णी मोम से ढके रहते हैं जो इनके रंग को छिपाए रखती हैं। इस कीट के निम्फ व वयस्क, दोनों ही पौधों को नुकसान पहुँचाते हैं।

प्रबन्धन

1. नीम गिरी घोल (4 प्रतिशत) किसी चिपकने वाला पदार्थ के साथ मिलाकर छिड़काव करें।

2. जैविक नियंत्रण के लिये परभक्षी क्राइसोपर्ला कार्निया/50,000 प्रथम अवस्था की सूंड़ी साप्ताहिक अन्तराल पर कीड़े की शुरूआत होने पर दो से तीन बार प्रयोग से कीट का सफलतापूर्वक नियंत्रण किया जा सकता हैं।
3. लेडी बर्ड भृंग (काक्सिलेना सेप्टेपंक्टाटा) परभक्षी/30 भृंग प्रति वर्ग मीटर के प्रयोग से कीट का नियंत्रण सफलतापूर्वक किया जा सकता हैं।
4. इस कीट के नियंत्रण के लिए डाइक्लोरोवास (0.05%) का छिड़काव उपयोगी हैं।

गोभीवर्गीय छेदक— यह गोभीवर्गीय फसलों को नुकसान पहुँचाने वाला सबसे प्रमुख कीट हैं। यह कीट मुख्य रूप से तैयार फसल पर ज्यादा प्रभाव डालता हैं। प्रभावित फसल में कीट पत्तागोभी एवं फूलगोभी के शीर्ष को छेदकर खा जाता हैं। जिससे फसल व्यावसायिक रूप से उपयोगी नहीं रह जाती हैं।

प्रबन्धन

1. चार प्रतिशत नीम गिरी चूर्ण के घोल का छिड़काव करें।
2. एच.एन.पी.वी. का 300 एल.ई. प्रति हैक्टेयर की दर से संक्रमण की अवस्था में छिड़काव करें।
3. कीट की प्रबल अवस्था में इण्डोक्साकार्ब की 0.5 मि.ली. मात्रा प्रति लीटर पानी की दर से छिड़कें।

पर्णमक्षी सूंड़ी— इस कीट की सूंड़ी गहरे रंग की धब्बेदार होती हैं। यह गोभीवर्गीय फसलों को नुकसान पहुँचाने वाला सबसे प्रमुख कीट हैं। सूंडियाँ पौधे के पत्तियों को खाते हुए अन्दर की ओर बढ़ जाती हैं तथा सम्पूर्ण फसल पर फैलकर अत्यधिक क्षति पहुँचती हैं।

प्रबन्धन—

1. गर्मी में खेती की गहरी जुताई करें। सावधानीपूर्वक पत्तियों को अण्डों सहित इकट्ठा करके नष्ट कर दें।
2. एस.एन.पी.वी. की 300 एल.ई. मात्रा प्रति हैक्टेयर की दर से छिड़काव करें।
3. प्रबल अवस्था में इण्डोक्साकार्ब की 0.5 मिली. मात्रा प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें।

प्रमुख रोग

आर्द्रगलन (डैम्पिंग आफ)— यह गोभीवर्गीय सब्जियों की पौधशाला में लगने वाला सबसे प्रमुख रोग हैं। इस रोग में पौधशालों में पौधा भूमि की सतह के पास से सड़ने लगते हैं तथा गिर जाते हैं। यह रोग मुख्य रूप से पिथियम एवं फ्यूजेरियम जाति के कवकों द्वारा होता हैं।

प्रबन्धन

1. रोग रहित बीज बोये एवं बीज शैया का सौर्यीकरण करें। बीज शोधन 2–3 ग्राम कार्बेन्डाजिम प्रति किग्रा बीज दर सें करें।
2. ट्राइकोडर्मा का उपयोग 20–25 ग्राम प्रति वर्ग मीटर की दर से बीज शैया शोधन में करें।

मृदुरोमिल आसिता (डाउनी मिल्ड्यू)— यह रोग गोभीवर्गीय सब्जियों में लगने वाले प्रमुख रोगों में से एक हैं। इस रोग में पत्तियों पर छोटे–छोटे अनियमित हल्के पीले रंग के धब्बे दिखाई देते हैं। यह रोग पौधशाला से फूल आने तक किसी भी अवस्था में लग सकता हैं। पत्तियों की निचली सतह पर सूक्ष्म पतलें बाल जैसे कवकों का जाल होता हैं। यह रोग पेरोनोस्पोरा पैरासिटिका नामक कवक के द्वारा होता हैं।

प्रबन्धन

1. रोग मुक्त बीजों का चुनाव करें। पूर्व फसलों के अवशेषों को जला दें।
2. रोग की प्रबल अवस्था में डाइथेम एम 45 की 2–3 ग्राम मात्रा प्रति लीटर पानी में घोलकर 6–7 दिन में अन्तराल पर छिड़काव करें।

अल्टरनेरिया पर्णदाग— भारत के मैदानी भागों में उगायी जाने वाली गोभीवर्गीय सब्जियों में लगने वाला यह सबसे महत्वपूर्ण रोग हैं। यह रोग मुख्य रूप से निचली पत्तियों पर अधिक पाया जाता हैं। यह रोग अल्टरनेरिया ब्रैसिकी तथा ब्रैसिसीकोला दोनों प्रजातियों द्वारा होता हैं। इस रोग में पत्तियों पर गोल, भूरे एवं काले धब्बे बनते हैं जो बाद में पौधें की समस्त भाग को संक्रमित कर देते हैं।

प्रबन्धन

1. रोगग्रस्त पत्तियों को तोड़कर एवं इकट्ठा करके खेत से बाहर जला दें।
2. रोग प्रबल अवस्था में कवच (क्लोरोथैलोनिल) कि 2 ग्राम प्रति लीटर मात्रा शाम के समय 6–7 दिन के अन्तराल पर दें।

सफेद गलन (व्हाइट राट)— यह रोग स्केलेरोटिनिया स्केलेरोशिओरम नामक कवक के द्वारा होता हैं। इस रोग में संक्रमित भागों पर सफेद कवक तंतु

दिखाई देते हैं और पूरा पुष्प क्रम, पर्ण वृन्त एवं अन्य संक्रमित भाग मुरझा जाते हैं। संक्रमित भागों पर काले रंग के कड़े स्केलेरोसिया बनते हैं।

प्रबन्धन

1. संक्रमित भागों को तोड़कर एवं इकट्ठा करके खेत के बाहर जला दें।
2. रोग की प्रबल अवस्था में 1.5 ग्राम कार्वेन्डाजिम प्रति लीटर पानी की दर से छिड़के।
3. 2.5 ग्राम डाइथेन एम 45 की मात्रा प्रति लीटर पानी की दर से घोलकर 4–6 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करें।

जीवाणु काला गलन (ब्लैक राट)– यह एक जीवाणु जनित रोग हैं, जो जैन्थामोनास कैम्पोस्ट्रिस नामक जीवाणु के द्वारा होता हैं। इस रोग में पत्तियों एवं शिराओं का रंग काला पड़ जाना सबसे प्रमुख लक्षण हैं।

प्रबन्धन

1. रोगमुक्त एवं स्वस्थ बीज का चुनाव करें। संक्रमित भागों को तोड़कर जला दें।
2. रोक की प्रबल अवस्था में स्ट्रेप्टोसाइक्लिन रसायन के 1 ग्राम मात्रा प्रति 5 लीटर पानी की दर से छिड़कें।

पुष्प एवं औषधि पौधों में फसल सुरक्षा के उपाय

डा. राकेश कुमार[1], डा. जितेन्द्र कुमार[2], डा. सी.पी.एन. गौतम[3], डा. आर.के. यादव एवं डा. सोहन लाल वर्मा

केन्द्रीय औषधि एवं सगंध पौंध संस्थान, लखनऊ[1], राजकीय आयुर्वेद मेडिकल कालेज, लखनऊ[2], चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौ. विश्वविद्यालय, कानपुर[3]

भारतवर्ष में विभिन्न प्रकार के पुष्प एवं सुगंधित फसलों जैसे गुलाब, गेंदा, गुलदाउदी, ग्लेडियोलस, रजनीगंधा, सर्यगन्धा, अश्वगंधा, सफेद, मुसली, तुलसी, शतवारी, कलिहारी, मुलेठी ब्राही, कालामेघ स्टीविया, घृतकुमारी (ऐलोवेरा) इत्यादि की खेती अनेकों राज्यों में सफलतापूर्वक की जा रही हैं। किसी भी पौधे का औषधीय महत्व उसमें पाए जाने वाले कुछ विशेष पदार्थ जैसे– ऐल्केलॉयडस, वाष्पशील तेल आदि के कारण होता है। औषधीय पौधों का उपयोग अनेक रोगों को ठीक करने में किया जाता है जैसे मिर्गी, पागलपन, मंदबुद्धि, वात, गठियावात, पेट दर्द आदि में किया जाता है। औषधीय पौधे मलेरिया, त्वचा रोग आदि में भी लाभकारी है। औषधीय पौधों के क्षेत्र के विकास को बढ़ावा देने के लिए, भारत सरकार ने 24 नवंबर, 2000 को राष्ट्रीय औषधीय पादप बोर्ड की स्थापना की। वर्तमान में, बोर्ड आयुष मंत्रालय (आयुर्वेद, योग और प्राकृतिक चिकित्सा, यूनानी, सिद्ध और होम्योपैथी), भारत सरकार के अधीन कार्य कर रहा है।

भारतीय किसानों द्वारा वैज्ञानिक विधियों को अपनाकर गुणवत्ताउक्त पुष्प एवं सुगंधित फसलों का सफल उत्पादन करके अच्छा पैसा कमाया जा सकता हैं। जिसका विवरण निम्न प्रकार है–

1. कुतरने वाले कीटः

(क) डायमन्ड बैक माथः नामक हीरक पृष्ठ पतंगे अपने अण्डे प्रायः पत्ती के निचली सतह नसों के पास समूह में न देकर एक–एक देती है। इसकी सून्डी पत्तियों को खा कर छलनी कर देती है। कभी–कभी सून्डी मुख्य डन्ठल में पहुंच कर क्षति पहुँचाती है। यह अपना जीवन चक्र एक महीने में पूरा कर लेती है। मादा कीट लगभग 60–70 अण्डें देती है। यह कीट गोभी वर्गीय सजावटी फसलों की एक प्रमुख समस्या हैं। इस कीट की सूड़ियां पत्तियों को बीच–बीच में से खाती रहती है तथा अपना मल पदार्थ भी त्यागती रहती हैं जिससे फूल बाजार में बेचने योग्य नहीं रहता हैं और बाजार मूल्य भी घट जाता है।

(ख) दीमकः फूलों की फसल सबसे पहले दीमक से प्रभावित होती हैं। इसका आक्रमण पौंधशाला से शुरू होता है। जो बाद में रोपे गये पौधों के मूलरोम को खा जाती है। बाद में बढ़े हुए पौधों को इस प्रकार से हानि पहुंचाती हैं कि ऊपरी ब्राह्त्वचा को छोड़कर शेष सभी भागों को खा लेती है और इसके स्थान पर मिट्टी भर देती हैं। इस प्रकार से फसलों में 20–50 प्रतिशत की हानि पाई गई है।

(ग) बिहार की बालदार सूंड़ीः यह कीट लगभग सभी सजावटी फूलों वाली पौधों को नुकसान पहुँचाती हैं। यह हरी पत्तियों को खाकर पौधों को पत्ती विहीन कर देती है। जिससे पौधा भोजन नहीं बना पाता हैं और सूख जाता है।

(घ) तना मक्खी *(मेलेनेएग्रोमाइजा फैसेओली)*: सूंड़ियां तने में छेदकर अन्दर से खाती रहती है जिससे पौधा सूख जाता हैं।

2. चूसने वाले कीट

(क) माहूँ *(माइजस पर्सिकी, माइक्रोसाइफम रोजिफार्मिस, एफिस क्रेसिवोरा)*: सजावटी फूलों में लगने वाला एक महत्वपूर्ण कीट है। इसके शिशु तथा प्रौढ़ दोनों पौधे की पत्तियों, कोमल भागों तथा फलियों से रस चूसते रहते हैं। जिससे पौधों की पत्तियां सिकुड़कर नीचे की ओर मुड़ जाती और पीली पड़कर गिर जाती है तथा तना कमजोर होकर सूख जाता हैं। प्रभावित फलियों में बीज नहीं बनते हैं।

(ख) सफेद मक्खी *(बेमिसीया टेबेसाई)*: इस कीट के शिशु एवं वयस्क मुख्य रूप से पत्तियों तथा कोमल भागों से रस चूसती है तथा फसल में वायरस, जनित पीला मोजेक रोग फैलती है। जिसके फलस्वरूप पौधों की पत्तियां धीरे–धीरे पीला होकर

गिरने लगती है। और उपज में कमी आ जाती हैं। इसके शिशु एवं वयस्क मधु–बिन्दु पैदा करते हैं जिसपर सूटी मोल्ड उत्पन्न हो जाती है। जो प्रकाश संश्लेषण में बांधा पहुँचाती हैं।

(ग) हरा तेला, फुदका, जैसिड *(ऐमरसका स्पीसीज)*: ये छोटे–छोटे फुदकने वाले कीट होते हैं तथा लिटिल लीफ डिजीज के भी वाहक हैं। इनका रंग हरा होता हैं। शिशु व प्रौढ़ दोनों पत्तियों की निचली सतह से रस चूस कर नुकसान पहुंचाते हैं। जो बाद में पत्तियां भूरी होकर सूखने लगती हैं। पत्तियां सूखने के इस प्रकार के लक्षण को फुदका जनित दाह कहते हैं। इस प्रकार की हानि कीट की जहरीली लार के कारण होती हैं।

(घ) पर्ण सुरंगक (लीफ माइनर): इस कीट का प्रकोप सजावटी फूलों के फसलों में छोटी अवस्था में अधिक होता हैं। सूण्डी पत्तियों के अन्दर ही अन्दर में खाकर बारीक, सफेद रंग की टेढ़ी–मेढ़ी सुरंगें बना देती हैं जिससे पत्तियाँ भोजन नहीं बना पाती हैं और सफेद होकर सूख जाती हैं।

पुष्प एवं औषधि पौधों के प्रमुख रोग

(क) झुलसा रोग *(अल्टरनेरिया स्पेशीज)*: इस रोग में पत्तियों, पुष्प पर तथा बाद में फलियों पर कत्थई रंग के धब्बें बनते हैं। जिसमें गोल–गोल छल्लें केवल पत्तियों पर स्पष्ट दिखाई देते हैं। जिसके कारण पौधों की वृद्धि रूक जाती है और उत्पादन में भारी कमी आ जाती है।

(ख) सफेद गेरूई रोग *(एल्बूगो केण्डिडा)*: इस रोग में पौधों की पत्तियों, टहनियों, पुष्पक्रमों, फलियों पर सफेद दाग दिखाई देते हैं। जो पौधों को नुकसान पहुंचाते है। जिससे उपज में भारी गिरावट आ जाती है।

(ग) सफेदगलन *(स्क्लेरोटिनिया स्क्लेरोयियोरम)*: इस रोग का संक्रमण दिसम्बर–जनवरी के महीने में कम तापमान, बदली का मौसम, अधिक वातावरण आर्द्रता एवं मिट्टी में अधिक नमी में ही होता है। संक्रमण फूल आने की अवस्था में शुरू होता है। तना, पत्तियों और फलों पर मुलायम एवं गीली सड़न होती है तथा बाद में इसके ऊपर सफेद फफूँद की वृद्धि होती है। इसके बाद कडें स्कलेरोशिया के रूप में दिखाई पड़ती है।

समन्वित नाशीजीव प्रबंधनः यह फसल उत्पादन एवं फसल सुरक्षा की मिली जुली प्रणाली है जिसका मूल सिद्धांत कर्षण, क्रियाओं, भौतिक, यान्त्रिक, जैविक और रसायनिक नियंत्रण के बीच समन्वय स्थापित करना है। इस विधि को अपनाते समय कृषक भाइयों को यह भी ध्यान देना है कि उनका दृष्टिकोण लाभ के साथ–साथ मित्रता निभाने की ओर हो अतः इस विधि को अपनाकर पुष्प एवं सुगंधित फसलों की खेती में लगने वाले कीट–पतंगों का प्रबंधन निम्नलिखित प्रकार से कर सकते हैं।

1. सस्य विधियों द्वारा कीट प्रबन्धनः

- ✓ पुष्प एवं सुगंधित फसलों की खेती की तैयारी हेतु ग्रीष्म कालीन गहरी जुताई करें जिससे हानिकारक भूमिगत नाशीकीटों के वयस्क, गिडार, इल्लिया तथा अण्ड़े इत्यादि जो मृदा में सुषुप्तावस्था में रहते हैं।
- ✓ उर्वरकों की अनुशासित मात्रा और कार्बनिक खादों का प्रयोग करें।

2. यात्रिक नियंत्रण

- ✓ यौन रसायन आकर्षक जाल, प्रकाश जाल, चिपचिपे जाल, एवं सर्वेक्षण द्वारा कीटों की निगरानी एवं पूर्वानुमान लगाये।
- ✓ फसलों की हानिकारक सूड़ियों को इकट्‌ठा करके हाथ से पकड़कर मार दें।
- ✓ कीटों के अण्डों एवं ग्रसित पौधें को खेत से निकाल कर नष्ट कर दे।

3. जैविक नियंत्रण– मित्र कीटों को पहचानकर इनका संरक्षण करना चाहिए, जैसे मकड़ी, रेडूविड बग, पाइडेरस, प्रेइंगमेन्टिस, ट्राइकोग्रामा, क्राइसोपार्ला, किशरी मक्खी आदि।

4. रासायनिक नियंत्रण– जब अन्य विधियों द्वारा कीट नियंत्रण में आशानुसार सफलता नहीं मिलती है और कीट की संख्या आर्थिक हानि स्तर पर ऊपर पहुंच जाती है तो इस दशा में मान्यता प्राप्त कीटनाशियों का प्रयोग उचित मात्रा में अदल–बदल कर करें। जैसे दीमक, सफेद गिडार, तना बेधक, जड़ बेधक तथा रस चूसने वाले कीड़ों से बचाने के लिए 10–15 किग्रा प्रति है. की दर कार्बोफ्यूरान 3 प्रतिशत जी. या क्वीनालफास 5 जी का प्रयोग भूमि में करें। सभी चूसने वाले

कीटों, पर्णजीवी (थ्रिप्स) व माहूँ कीट के नियंत्रण के लिए एमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.सी. 3.0 मिली. प्रति 15 लीटर पानी की दर से या मैलाथियान 50 ई.सी. 1.5 मिली. प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करें।

कुतरने वाले कीटों के लिए क्यूनालफास 25 ई.सी. 1.5–2 मिली. प्रति लीटर पानी की दर छिड़काव करें।

गेरूई रोग के नियंत्रण के लिए प्रोपोकोनोजोल 25 ई.सी. 1.0 मिली. प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

चुर्णी झुलसा की रोकथाम के लिए हेक्साकोनाजोल 2 मिली दवा प्रति लीटर पानी की दर से सात दिन के अंतराल पर एक छिड़काव करें।

मसूर की खेती

सचिन यादव, डॉ. राजेन्द्र कुमार यादव, अभिषेक सिंह यादव एवं राकेश कुमार

आनुवंशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग, चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कानपुर–208002

मसूर *(Lens culinaris)* एक महत्वपूर्ण दलहनी फसल है जिसे विश्वभर में मुख्य रूप से सूखे क्षेत्रों में उगाया जाता है। यह प्रोटीन, विटामिन और खनिजों का अच्छा स्रोत है और मानव आहार में एक प्रमुख स्थान रखती है। मसूर की खेती भारत के कई राज्यों जैसे उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बिहार, पंजाब और राजस्थान में व्यापक रूप से की जाती है।

उपयोगिता

दलहनी वर्ग में मसूर सबसे प्राचीनतम एवं महत्वपूर्ण फसल है। इसके दानों में सर्वाधिक पौष्टिक होने के साथ–साथ इस दाल को खाने से विभिन्न प्रकार की बीमारियां नहीं होती हैं। अर्थात् यह सेहत के लिए फायदेमंद है। मसूर में विभिन्न प्रकार के पोषक तत्व पाये जाते है। जैसे–प्रोटीन 25 प्रतिशत, वसा 1.5 प्रतिशत, कार्बोहाइड्रेट 60.8 प्रतिशत, रेशा 3.2 प्रतिशत तथा खनिज लवण जैसे कैल्शियम 68 मि.ग्रा., लोहा 0.21 मि.ग्रा. राइबोफलोविन 0.21 मि.ग्रा., थाइमिन 0.51 मि.ग्रा. आदि। रोगियों के लिए मसूर की दाल अत्यन्त लाभदायक मानी गयी है। क्योंकि यह अत्यन्त पाचक है। मसूर का उपयोग दाल के अलावा विविध उपयोग में जैसे– नमकीन एवं मिठाइयां आदि बनाने में किया जाता है। इसका हरा व सूखा चारा पशुओं के लिए स्वादिष्ट व पौष्टिक होता है। दलहनी फसल होने के कारण इसकी जड़ों में गांठे पाई जाती है। जिसमें सूक्ष्म जीवाणु वायुमण्डल की स्वतंत्र नत्रजन का स्थिरीकरण भूमि में करते है। जिससे भूमि की उर्वरा शक्ति बढ़ती है। इसके अलावा मृदा क्षरण रोकने के लिए मसूर के आवरण फसल के साथ में भी उगाया जाता है।

जलवायु और मिट्टीः

मसूर की खेती के लिए शुष्क और ठंडी जलवायु आदर्श मानी जाती है। यह 18–25 डिग्री सेल्सियस तापमान पर अच्छी उपज देती है। इसके लिए अच्छे जल निकासी वाली दोमट मिट्टी सर्वश्रेष्ठ होती है। मिट्टी का पीएच 6–7 के बीच होना चाहिए। हल्की अम्लीय और क्षारीय मिट्टी में भी इसकी खेती संभव है।

बुवाई का समयः

मसूर की बुवाई का आदर्श समय अक्टूबर से नवंबर तक होता है। बुवाई का सही समय क्षेत्र की जलवायु और मौसम पर निर्भर करता है। ठंड के समय में बुवाई करने से पौधे को सही तापमान और नमी मिलती है, जिससे उपज में वृद्धि होती है।

बीज की मात्रा और बुवाईः

मसूर की खेती के लिए प्रति हेक्टेयर 35–40 किलोग्राम बीज की आवश्यकता होती है। बुवाई से पहले बीजों को फफूंदनाशक से उपचारित करना आवश्यक है ताकि पौधों को रोगों से बचाया जा सके। बीजों को 3–4 सेमी. गहराई में बुवाई करनी चाहिए। बीजों की कतार से कतार की दूरी 30 सेमी. और पौधे से पौधे की दूरी 10–15 सेमी. होनी चाहिए।

उर्वरक और खाद प्रबंधनः

मसूर की खेती में उर्वरकों की आवश्यकता कम होती है, लेकिन अच्छे उत्पादन के लिए 20–25 किलोग्राम नाइट्रोजन, 40–50 किलोग्राम फॉस्फोरस और 20 किलोग्राम पोटाश प्रति हेक्टेयर देना लाभकारी होता है। जैविक खाद का उपयोग मिट्टी की उपजाऊ क्षमता को बनाए रखने में मदद करता है।

उन्नत किस्मेंः–

क्रम	किस्म	उपज	अवधि
1	आईपीएल–315	129–138	15–20
2	शेखर–2	125–130	20–22
3	शेखर–3	125–130	20–22
4	केएलबी–345 (शेखर–4)	110–115	18–20
5	पंत मसूर–4	135–140	18–20
6	आईपीएल–316	115–120	18–22

सिंचाई प्रबंधनः

सामान्यतः मसूर की फसल असिंचित क्षेत्रों में ही ली जाती है। इसलिये यदि सिंचाई सुलभ हो तो बुवाई पलेवा लगाकर करना चाहिए। इसमें मिट्टी में नमी बनी रहती है तथा अकुंरण अच्छा होता है। इसके बाद फसल में सिंचाई की आवश्कता नहीं होती है। यदि पानी उपलब्ध हो तो एक सिंचाई फूल आने के पहले या बोने के 40–45 दिन बाद सिंचाई करें।

रोग और कीट नियंत्रणः

मसूर की फसल पर मुख्य रूप से उकठा रोग, चूर्णी फफूंद और पत्ती

झुलसा रोग का प्रकोप होता है। बीज उपचार और समय–समय पर फसल का निरीक्षण करके इन रोगों से बचा जा सकता है। इसके अलावा, फसल पर चने की इल्ली और एफिड्स जैसे कीटों का भी हमला होता है, जिनसे निपटने के लिए उचित कीटनाशकों का प्रयोग करना चाहिए।

फसल कटाई और उपजः

मसूर की फसल 110–120 दिनों में तैयार हो जाती है। जब पौधों की पत्तियां सूखने लगें और फलियां पकने लगें, तो फसल की कटाई करनी चाहिए। कटाई के बाद फसल को धूप में अच्छी तरह सुखा कर दानों को थ्रेशिंग द्वारा अलग किया जाता है। मसूर की औसत उपज 12–15 क्विंटल प्रति हेक्टेयर होती है, लेकिन अच्छे प्रबंधन और अनुकूल परिस्थितियों में यह उपज 18–20 क्विंटल तक भी जा सकती है।

किसानों का एटीएम : बकरी पालन

सोहन लाल वर्मा, पृथ्वी पाल, आनन्द सिंह रावत एवं निहारिका वर्मा

चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कानपुर–208002

बकरी पालन कम लागत और सामान्य देखरेख में गरीब किसानों और खेतिहर मजदूरों की आय का एक अच्छा साधन है, इसे गरीबों की गाय भी कहा जाता है। बकरी पालकों के लिए बकरियाँ एटीएम के रूप में उनकी मदद करती हैं। अगर सरकार बकरी पालन पर ध्यान दे तो गरीब किसानों तथा खेतिहर मजदूरों की आय दोगुनी करने में काफी मददगार साबित हो सकती हैं। बकरी पालन मुख्यतः मांस व दूध के लिए किया जाता है। जहाँ पर दूध देने वाले बड़े पशुओं का पालन अधिक स्थान घेरने, अधिक धन खर्च होने और अधिक चारे दाने का इन्तजाम न होने के कारण कठिन हो ऐसी दशा में बकरियों को सफलतापूर्वक पाला जा सकता है। प्रायः बेकार समझे जाने वाले पदार्थों को भी बड़े चाव से खा लेती हैं। बकरी का मांस सर्वोत्तम होने के साथ–साथ इसका दूध भी काफी लाभदायक होता है। छोटे बच्चों को तो यह माँ के दूध के समान ही पोषण देता है। बकरी का दूध आसानी से हजम हो जाने के कारण बीमार लोगों के लिए बहुत उपयोगी होता है। दूध देना बन्द करने पर बकरियों को बेचने पर अच्छा दाम भी मिल जाता है। बकरियों की मेंगनी से अच्छी गुणवत्तायुक्त जैविक खाद तैयार होती है व मरने के बाद इसकी खाल भी बिक जाती है।

इस प्रकार बकरियों से ब्याने पर बच्चा, दूध, मांस, खाद तथा मरने पर खाल से भी धन प्राप्त होता है। इस प्रकार बकरी पालन एक अति उत्तम लाभदायक व्यवसाय है जिसको गरीब किसान अपनी आय बढ़ाने तथा बेरोजगार नवयुवक स्वरोजगार के रूप में उपयोग कर सकते हैं।

बकरियों की नस्लें:– भारत में बकरियों की 21 नस्लें पायी जाती हैं जिनकी अपनी–अपनी विशेषता होती है। बकरी पालन शुरू करने जा रहे तो उत्तम नस्ल की बकरियों का चयन करें। स्टाल फीडिंग व दूध के लिए बरबरी नस्ल की बकरी पालें तथा चराई के लिए सिरोही नस्ल अच्छी होती हैं। दूध व मांस दोनों के हिसाब से जमुनापारी, सिरोही, ब्लैक बंगाल, बीटल नस्ल की बकरियाँ उत्तम मानी जाती हैं। ये बकरियां एक से डेढ़ लीटर तक दूध तथा इनका मांस का उत्पादन भी अच्छा होता है।

बकरियों का भोजन:– बकरियाँ बेर, झरबेर, करील आदि की पत्तियाँ अपने पिछले पैरों के सहारे बड़े चाव से खाती हैं। यह स्वभाव से घूमना–फिरना अधिक पसन्द करती हैं। बाँधकर खाना इनको पसन्द नहीं है किन्तु कुछ समय तक बाँधकर खिलाने की आदत डालने पर ऐसा सम्भव हो सकता है। बरबरी नस्ल को बाँधकर खिलाया जा सकता है।

बकरियों का चारा:–

1. **पत्तियाँ**:– बेर, झरबेर, नीम, पाकड़, गूलर, बरगद, सु–बबूल, देशी बबूल आदि की पत्तियाँ बड़ें चाव से खाती हैं।
2. **घासें**:– दूब, मेथी, स्टाइलो घास, अन्जना आदि।
3. **खरपतवार**:– गोखरू, आक, हिरनखुरी, वनगोभी कांस, मूंज, कासनी आदि।
4. **साग–सब्जियों का बेकार भाग**:– उपयोग में न आने वाला व्यर्थ भाग बकरियों को खिलाने के लिए उपयोग में लाया जा सकता है।
5. **हरा चारा**:– बरसीम, लोबिया, रिजका, लुसर्न, जई, ग्वार आदि।
6. **सूखा चारा**:– अरहर, चना, मटर, मूंग, उड़द का भूसा।

बकरियों का आहार:–

नवजात बच्चों का आहार:– बच्चों के पैदा होने के चार–पाँच दिनों तक उन्हें खीस पिलाई जाती है और उसके बाद में माँ से अलग कर दिया जाता हैं। फिर इन्हें दिन में दो बार थनों से अलग कर थोड़ा–थोड़ा दूध पिलाया जाता है। दूध के अतिरिक्त बच्चों को कीप आहार और अच्छे गुणों वाला द्विदालीय सूखा चारा तथा खनिज पदार्थ भी दिया जाता है। इसके साथ ही साफ ताजा पानी भी पीने के लिए दिया जाता है।

बढ़ने वाले बच्चों का आहार:– हरे चारे में जई, मटर, बरसीम, लोबिया आदि तथा इन्हें सुखाकर आहार के रूप में खिलाया जा सकता है। आमतौर पर कम वजन वाले बच्चों को 60–80 ग्राम तथा अधिक वजन वाले बच्चों को 80–120 ग्राम आहार प्रतिदिन की दर से दिया जाता है।

वयस्क बकरे का आहारः— वयस्क बकरे के आहार में 40 प्रतिशत दाना और 60 प्रतिशत सूखा चारा होना चाहिए। ब्रीडिंग करने वाले वयस्क बकरे को प्रतिदिन सूखे चारे के साथ हरा चारा और 500 ग्राम दाना देना चाहिए।

गाभिन बकरियों का आहारः— गाभिन बकरियों को आहार देते समय माँ के शरीर में पल रहे बच्चे के भोजन का भी ध्यान रखना चाहिए। ऐसी दशा में अतिरिक्त भोजन न देने से माँ के शरीर का पोषण बच्चे में चले जाने से माँ कमजोर हो जाती है। इसलिए गर्भकाल के आखिरी समय में बकरियों को गुणवत्तायुक्त द्विदालीय हरे चारे (बरसीम, लोबिया) के साथ प्रतिदिन 500 ग्राम दाना भी देना चाहिए।

दूध देने वाली बकरियों का आहारः— दूध देने वाली बकरियों को पौष्टिक हरे चारे के साथ संतुलित आहार का 150 ग्राम जीवन निर्वाह के लिए तथा 300—400 ग्राम अतिरिक्त प्रति लीटर दूध के हिसाब से देना चाहिए। बकरियों के आहार में 57 प्रतिशत मक्का, 20 प्रतिशत मूंगफली की खली, 2 प्रतिशत मिनरल मिक्चर, 1 प्रतिशत नमक होना चाहिए।

बकरियों में गर्मी के लक्षण तथा गाभिन करानाः— गर्मी में आने पर बकरी बेचैन रहती है, बार—बार पूँछ हिलाती है, जल्दी—जल्दी पेशाब करती है तथा कभी—कभी आवाज लगाती है। उत्तर भारत में बकरियों को 15 सितम्बर से नवम्बर तक तथा 15 अप्रैल से जून तक गाभिन कराना चाहिए। सही समय पर बकरियों को गाभिन कराने से नवजात मेमनों की मृत्युदर कम होती है।

बकरियों के प्रमुख रोग एवं बचावः—

ठंड लगना (न्यूमोनिया):— यह बकरियों की खतरनाक बीमारी है। ठंड लगने के कारण बकरी को तेज बुखार हो जाता है, भूख कम लगती है, सांस फूलती है तथा कभी—कभी खाँसती भी है। इससे बचाव हेतु बकरी को ठंड से बचायें तथा कपड़ा लपेटकर गर्म रखें। छाती पर तारपीन या सरसों का तेल मालिस करें। गर्म दूध पिलायें तथा पशु चिकित्सक की सलाह से दवाई दें।

गर्भपातः— इस रोग में बकरी गर्भकाल से पूर्व ही बच्चा दे देती है। इसका कारण बकरियों का आपस में लड़ना, डर जाना, अधिक थकान तथा गलत भोजन खिलाना है।

अफराः— बकरियों में यह रोग गलत व अधिक चारा या दाना खाने के कारण होता है। गैस बनने से बकरी के पेट का बायां हिस्सा फूल जाता है ऐसी दशा में पशु चारा खाना बन्द कर देता है तथा उसे सांस लेने में कठिनाई होती है। बकरी को सरसों का तेल 500 मिली तथा तारपीन का तेल 25 मिली के हिसाब से मिलाकर देने से लाभ होता है। मैगसल्फ तथा सादा नमक 250 ग्राम, सौठ 30 ग्राम तथा शीरा 500 ग्राम मिलाकर बकरी को 2—3 दिन तक देना चाहिए।

किसान उत्पादक संगठन की सम्पूर्ण जानकारी

मयंक तिवारी[1], डॉ पी.के. सिंह[2], शुभम कुमार[2] एवं पी. रवि दीक्षित[2]

[1]गोविन्द बल्लभ पन्त कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय पंतनगर, उत्तराखंड,
[2]चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर

किसान उत्पादक संगठन (एफपीओ): किसान उत्पादक संगठन (एफपीओ) आम चुनौतियों का समाधान करने और कृषि उत्पादन, विपणन और मूल्य संवर्धन के विभिन्न पहलुओं में सामूहिक ताकत का लाभ उठाने के लिए किसानों द्वारा बनाई गई सामूहिक संस्थाएं हैं। देश में प्रचलित कानूनों और विनियमों के आधार पर एफपीओ विभिन्न कानूनी रूप ले सकते हैं जैसे सहकारी समितियां, उत्पादक कंपनियां या स्वयं सहायता समूह।

कृषि उत्पादन संगठन का सदस्य कौन बन सकता है?

कृषि उत्पादन के प्राथमिक उत्पादक के रूप में सदस्य बन सकते है जो संगठन के कार्य से संबंधित अपना कार्य या उत्पादक रखता हो। इसमें सदस्यता स्वैच्छिक है लेकिन सदस्यता के समय समिति के द्वारा निर्धारित निम्नतम शुल्क का प्रावधान है एवं समिति के नियमों का पालन करने पर सदस्य बन सकते है।

एफपीओ की अवधारणाः किसान उत्पादक संगठनों के पीछे अवधारणा यह है कि किसान, जो कृषि उत्पादों के उत्पादक हैं, समूह बना सकते हैं और भारतीय कंपनी अधिनियम के तहत खुद को पंजीकृत कर सकते हैं। इस प्रक्रिया को सुविधाजनक बनाने के लिए, लघु किसान कृषि व्यवसाय संघ (एसएफएसी) को कृषि और सहयोग विभाग, कृषि मंत्रालय, सरकार द्वारा अनिवार्य किया गया था। भारत सरकार, किसान उत्पादक संगठनों (एफपीओ) के गठन में राज्य सरकारों का समर्थन करेगी। इसका उद्देश्य किसानों की प्रतिस्पर्धात्मकता को बढ़ाना और उभरते बाजार के अवसरों में उनका लाभ बढ़ाना है। एफपीओ के प्रमुख कार्यों में बीज, उर्वरक और मशीनरी की आपूर्ति, बाजार संपर्क, प्रशिक्षण और नेटवर्किंग और वित्तीय और तकनीकी सलाह शामिल होगी।

गठनः इच्छुक किसानों की पहचान करें पहला कदम उन किसानों के समूह की पहचान करना है जो एफपीओ बनाने में रुचि रखते हैं। यह सामान्य रुचियों, भूगोल या उनके द्वारा उगाई जाने वाली फसलों पर आधारित हो सकता है।

कानूनी पंजीकरणः एफपीओ को कानूनी रूप से पंजीकृत संस्था होना आवश्यक है। किसानों को कानूनी संरचना (जैसे सहकारी समिति या कंपनी) के प्रकार पर निर्णय लेना होगा और पंजीकरण के लिए आवश्यक कागजी कार्रवाई पूरी करनी होगी।

शासन संरचनाः सदस्यों, नेताओं और कर्मचारियों के लिए स्पष्ट भूमिकाओं और जिम्मेदारियों के साथ एक शासन संरचना स्थापित करें। इसमें एफपीओ के संचालन की देखरेख के लिए निदेशक मंडल या समिति के सदस्यों का चुनाव करना शामिल है।

व्यापार की योजनाः एफपीओ के उद्देश्यों, गतिविधियों, वित्तीय अनुमानों और स्थिरता के लिए रणनीतियों की रूपरेखा तैयार करते हुए एक व्यवसाय योजना विकसित करें।

पदोन्नतिः जागरूकता अभियानः एफपीओ बनाने के लाभों, जैसे सौदेबाजी की शक्ति में वृद्धि, बाजारों तक पहुंच और बेहतर आजीविका के बारे में किसानों को शिक्षित करने के लिए जागरूकता अभियान चलाना।

प्रशिक्षण और क्षमता निर्माणः किसानों को एफपीओ को प्रभावी ढंग से चलाने के लिए आवश्यक कौशल और ज्ञान से लैस करने के लिए प्रशिक्षण और क्षमता निर्माण कार्यक्रम प्रदान करें। इसमें वित्तीय प्रबंधन, विपणन, शासन और कृषि सर्वोत्तम प्रथाओं पर प्रशिक्षण शामिल है।

साझेदारीः एफपीओ की गतिविधियों का समर्थन करने और संसाधनों और विशेषज्ञता तक पहुंचने के लिए सरकारी एजेंसियों, गैर सरकारी संगठनों, कृषि विस्तार सेवाओं और अन्य हितधारकों के साथ साझेदारी बनाएं।

बाजार संपर्कः एफपीओ सदस्यों को खरीदारों, प्रोसेसरों, खुदरा विक्रेताओं और निर्यातकों के साथ जोड़कर बाजार संपर्क की सुविधा प्रदान करना। इसमें क्रेता–विक्रेता बैठकें, व्यापार मेले और नेटवर्किंग कार्यक्रम आयोजित करना शामिल हो सकता है। एफपीओ को प्रभावी ढंग से चलाने के लिए आवश्यक कौशल और ज्ञान वाले किसान चाहिए।

इसमें वित्तीय प्रबंधन, विपणन, शासन और कृषि सर्वोत्तम प्रथाओं पर प्रशिक्षण शामिल है।

एफपीओ को समर्थन देने वाली सरकारी नीतियांः गठन और संवर्धन सहायताः कई सरकारें एफपीओ के गठन और प्रचार को सुविधाजनक बनाने के लिए वित्तीय और तकनीकी सहायता प्रदान करती हैं। इसमें पंजीकरण शुल्क, क्षमता निर्माण कार्यक्रम और बुनियादी ढांचे के विकास के लिए सब्सिडी शामिल है।

एफपीओ से मिलने वाले लाभः औसत भूमि जोत आकार का परिसीमनः औसत खेत का आकार 1970–71 में 2.3 हेक्टेयर से घटकर 2015–16 में 1.08 हेक्टेयर हो गया। छोटे और सीमांत किसानों की हिस्सेदारी 1980–81 में 70 प्रतिशत से बढ़कर 2015–16 में 86 प्रतिशत हो गई।

एफपीओ किसानों को सामूहिक खेती में शामिल कर सकते हैं और छोटे खेतों से उत्पन्न उत्पादकता के मुद्दों का समाधान कर सकते हैं। इसके अलावा, खेती की बढ़ती तीव्रता के कारण अतिरिक्त रोजगार सृजन भी हो सकता है।

- **कॉरपोरेट्स के साथः** एफपीओ किसानों को सौदेबाजी में बड़े कॉर्पोरेट उद्यमों के साथ प्रतिस्पर्धा करने में मदद कर सकता है, क्योंकि यह सदस्यों को एक समूह के रूप में बातचीत करने की अनुमति देता है और छोटे किसानों को इनपुट और आउटपुट दोनों बाजारों में मदद कर सकता है।
- **एकत्रीकरण का अर्थशास्त्रः** एफपीओ सदस्य किसानों को कम लागत और गुणवत्तापूर्ण इनपुट प्रदान कर सकता है। उदाहरण के लिए, फसलों के लिए ऋण, मशीनरी की खरीद, इनपुट कृषि–इनपुट (उर्वरक, कीटनाशक, आदि) और कृषि उपज की खरीद के बाद प्रत्यक्ष विपणन। इससे सदस्यों को समय, लेनदेन लागत, संकटकालीन बिक्री, मूल्य में उतार–चढ़ाव, परिवहन, गुणवत्ता रखरखाव आदि के मामले में बचत करने में मदद मिलेगी।
- **सामाजिक प्रभावः** सामाजिक पूंजी एफपीओ के रूप में विकसित होगी, क्योंकि इससे एफपीओ में महिला किसानों के लिंग संबंधों और निर्णय लेने में सुधार हो सकता है। इससे सामाजिक संघर्ष कम हो सकते हैं और समुदाय में भोजन और पोषण मूल्यों में सुधार हो सकता है।

निष्कर्षः

एफपीओ ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि की वृद्धि और विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, और उनके गठन और संचालन का समर्थन करने वाली सरकारी नीतियां किसानों की आजीविका में सुधार लाने और सतत कृषि विकास को बढ़ावा देने में उनकी पूरी क्षमता का एहसास करने के लिए आवश्यक हैं।

रबी मौसम की मुख्य पौष्टिक चारा फसलों की खेती

शुभम कुमार[1], पी.के. सिंह[1], सुभाष चंद[2] एवं मयंक तिवारी[3]

[1]चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर,
[2]भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान, झाँसी,
[3]गोविन्द बल्लभ पन्त कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, पंतनगर, उत्तराखंड

भारत एक कृषि प्रधान देश है जिसकी अर्थव्यवस्था में पशुपालन का महत्वपूर्ण योगदान है। देश में पशुओं द्वारा उत्पादित उत्पादों की मांग को ध्यान में रखते हुये पशुधन को बढ़ाने के लिये उत्तम चारा बहुत ही आवश्यक है, जैसे हमारे शरीर को संतुलित आहार की आवश्यकता होती है उसी प्रकार से पशुओं को संतुलित आहार बहुत आवश्यकता होती है। प्रमुख रबी चारा फसलें निम्नवत् हैं–

1. जई

भूमि एवं जलवायुः जई के लिए अच्छे जल निकास वाली बलुई दोमट भूमि होती है। यह हल्की क्षारीय तथा लवणीय भूमि में भी उगायी जा सकती है परन्तु भूमि का पी.एच. माान 8.5 से ज्यादा होने पर उपज प्रभावित होने की संभावना रहती है। हल्की अम्लीय भूमियों में भी जई को सफलतापूर्वक जगाया जा सकता है।

भूमि की तैयारीः जई की भूमि तैयारी के लिये हैरो अथवा कल्टीवेटर की 2–3 जुताईयां पर्याप्त होती है। खेत को समतल एवं मिट्टी को भुरभुरी बनाने के लिए प्रत्येक जुताई के बाद पाटा लगाना आवश्यक है।

बुवाई का समयः बुवाई के लिये अक्टूबर के प्रथम पक्ष से नवम्बर का प्रथम सप्ताह उपयुक्त होता है, परन्तु लंबे समय तक हरा चारा प्राप्त करने के लिये इसे दिसम्बर के प्रथम सप्ताह तक बोया जा सकता है।

बीजदर एवं बुवाईः जई को आमतौर पर 20–25 सेमी. की दूरी पर पंक्तियों में बोने से एक हेक्टेयर क्षेत्रफल के लिये 100 किग्रा. बीज की आवश्यकता होती है। परन्तु छोटे दाने वाली प्रजातियों 75–80 किग्रा. बीज पर्याप्त होता है। अधिक कल्ले वाली प्रजातियों को पंक्तियों में 30 सेमी. की दूरी पर बोना ज्यादा उपयुक्त होता है।

सारणीः जई की उन्नत प्रजातियां एवं हरे चारे की उत्पादकता

प्रजातियां	उपयुक्त क्षेत्र	हरा चारा (कु./हे.)
जे.एच.ओ.–829	पहाड़ी एवं सर्द क्षेत्र	500–550
जे.एच.ओ.–822	मध्य भारत	425–500
यू.पी.ओ.–2128	सम्पूर्ण भारत	400–575
यू.पी.ओ.– 94	सम्पूर्ण भारत	500–550
ओ.एल.–9	उत्तरीय, उत्तरीय पश्चिम एवं दक्षिण	400–525
ओ.एल.–125	मध्य एवं उत्तरीय पश्चिम	400–550
ओ.एस.–96	उत्तरीय भारत, अरूणाचल प्रदेश एवं दक्षिण	375–500
ओ.एस.–108	उत्तरीय पूर्वी एवं मध्य भारत	425–500

खाद एवं उर्वरकः फसल की बुवाई के लगभग 15–20 दिन पूर्व 10 टन गोबर की खाद/कम्पोस्ट को खेत में जुताई के समय मिलाना चाहिये, इसके अतिरिक्त बुवाई के समय 65 किग्रा यूरिया, 200 किग्रा सिंगल सुपर फास्फेट एवं 50 किग्रा म्यूरेट ऑफ पोटाश प्रयोग करना चाहिये।

सिंचाईः बुवाई के समय भूमि में उपयुक्त नमी न होने की दशा में पलेवा या खाली खेत की सिंचाई करनी चाहिये एवं पहली सिंचाई 20–25 दिन की अवस्था में कर देना चाहिये। इसके पश्चात 14–18 दिन के अन्तराल पर सिंचाई करनी चाहिये। अच्छी उपज के लिये फसल को 3–5 सिंचाइयों की आवश्यकता होती है।

खरपतवार नियंत्रणः खरपतवार नियंत्रण के लिए 25–30 दिन की अवस्था पर खुरपी से गुड़ाई कर खरपतवार निकाल देते हैं। जिससे फसल की अच्छी बढ़वार होती है।

कटाईः जई में एकल कटाई, द्वि कटाई और बहु कटाई वाली उन्नत किस्में पाई जाती हैं। तीन कटाइयाँ प्राप्त करने के लिये पहली कटाई 55–60 दिन पर तथा इसके पश्चात दूसरी एवं तीसरी कटाई पहली कटाई के हर 25–30 दिन पर करनी चाहिये।

उपजः उपरोक्त कृषि क्रियाओं को अपनाने से 500–700 कु/हें हरा चारा प्राप्त होता है। कटाइयों की संख्या बढ़ाने से हरे चारे की प्राप्ति की अवधि बढ़ जाती है परन्तु हरे चारे की उपज तथा शुष्क पदार्थ प्रति हे. की मात्रा लगभग अप्रभावित रहती है।

2. बरसीम

भूमि एवं भूमि की तैयारीः बरसीम की

खेती हेतु उपजाऊ दोमट भूमि उत्तम होती है तथा भूमि में जल निकास का उत्तम प्रबन्ध होना चाहिये। खेत को समतल होना चाहिये जिससे जल का भराव न हो। भूमि की जुताई 2—3 बार हैरो से कर कल्टीवेटर से पाटा लगाकर खेत को तैयार कर लेते हैं।

बोने का समयः बरसीम की बुवाई अक्टूबर के दूसरे सप्ताह से नवम्बर माह तक की जाती है। इसके लिये खेत को क्यारियों में बांट लेते हैं जिससे सिंचाई करने में आसानी होती है।

बीज एवं बीज दरः बरसीम के बीज में साधारणतः कासनी नामक खरपतवार के बीज मिले होते हैं। इन खरपतवारों के बीज को निकालने के लिये 10 प्रतिशत नमक के घोल में सारे बीज को डाल देते हैं। कासनी का बीज हल्का होने के कारण पानी के ऊपर तैरने लगता है। जबकि बस्सीम का बीज तली में जमा हो जाता है। बीज को निकाल कर साफ पानी से धोकर प्रयोग में लाते है। सामान्य स्थिति में बरसीम की बीजदर 25 किग्रा/हे. है।

सारणीः बरसीम की उन्नत प्रजातियाँ और प्राप्त चारे की मात्रा (कु./हे.)

प्रजातियाँ	हरा चारा (कु./हे.)
बरदान, एच.एफ.बी.—600, यू.पी. बी.—10, बी.एल.—2, बी.एल.—10, बी.एल.—22, जे.बी.—1	700—750
बी.बी.—2	900—1000
बी.बी.—3	500—550
बी.ए.—180	600—650
बी.एल—1	800—950

बुवाई की विधिः बुवाई के लिये खेत को क्यारियों में बांट के एवं बेड में 4—5 सेमी. की गहराई तक पानी भर हल्की पडलिंग करें रातभर भीगे हुये बीजों को पडल्ड खेत में छिड़काव करें।

खाद एवं उर्वरकः बुवाई से पहले 20—25 टन सड़ा हुआ गोबर की खाद कम्पोस्ट खेत में मिला देनी चाहिये। सिंचित खेतों में उर्वरक एक महत्वपूर्ण कारक है, जो फसल की वृद्धि एवं उत्पादकता को प्रभावित करता है। बरसीम एक दलहनी फसल है, इसकी जड़ों की गाँठों में राइजोबियम बैक्टीरिया होते है, जो वातावरण की नत्रजन आवश्यकता को पूर्ण करते है। प्रायोगिक रूप से बरसीम की बुवाई करते समय 20 किग्रा. नत्रजन/हे. की मात्रा पर्याप्त होती है।

सिंचाईः पहली सिंचाई बुवाई से 6—8 (लगभग—4—6 सेमी) दिन के अन्तराल पर करनी चाहिये। इसके पश्चात जाड़ों में 12—15 दिन तथा फरवरी—मार्च में 9—12 दिन के अन्तराल पर सिंचाईयों की आवश्यकता होती है। बरसीम की फसल में 10—12 सिंचाईयों की आवश्यकता होती है।

खरपतवार नियंत्रणः शुद्ध बीज का प्रयोग करने से खरपतवारों की काफी स्तर तक नियंत्रण हो जाता है। चारे के लिये ली जाने वाली फसल में खरपतवार नियंत्रण की कम आवश्यकता होती है।

रोग प्रबंधनः बरसीम की फसल में दिसम्बर से जनवरी के बीच महीने में फसल को पूर्ण रूप से धूप तथा बादल छाए रहने के कारण फसल की वृद्धि नहीं हो पाती और जड़—गलन एवं तना सड़न रोग होने की सम्भावना होती है। यदि फसल को काट दिया जाए तो जगह—जगह में सड़े हुए स्टबल्स से कवक को आसानी से देखा जा सकता है। रोग निम्नलिखित स्थिति में तेजी से फैलते हैं—

- देर से फसल की कटाई करने के कारण प्रकाश भूमि तक नहीं पहुंच पाना।
- बीच—बीच में लम्बे समय तक बादलों का छाए रहना।
- फसल चक्र अपनाने तथा गोबर की खाद का प्रयोग न करना।
- फसल को जल ठहराव से बचाने के लिये खेत को समतल करें।
- फसल की कटाई समय से करें।
- यदि बादल छाए रहे तब कम अन्तराल पर सिंचाई न करें।

कटाई प्रबंधन एवं चारा उपजः बरसीम की उपज में उत्पादन क्रियाओं में विभिन्नता के कारण बहुत अधिक अन्तराल हो जाता है। अनूकुल मौसम एवं सही सस्य प्रबंधन से 700—1000 कु/हे. हरा चारा प्राप्त होता है, अगर मौसम अनूकूल तथा कृषि क्रियायें पूर्ण रूप से न होने के कारण बरसीम की उपज में अत्यधिक रूप से घट जाती है।

टमाटर की उन्नत खेती

पृथ्वी पाल, सोहन लाल वर्मा, आनन्द सिंह रावत एवं निहारिका वर्मा
चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कानपुर–208002

भारत में उगाई जाने वाली सब्जियों में टमाटर एक प्रमुख स्थान रखने वाली लोकप्रिय तथा पोषक तत्वों से भरपूर फलदार सब्जी है। टमाटर स्वास्थ्य के लिए आवश्यक खनिज तत्व, विटामिन तथा विभिन्न उत्पाद बनाने के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। इसमें विटामिन, कैल्शियम, लोहा एवं अन्य आवश्यक खनिज तत्व प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं तथा इनमें एंटी ऑक्सिडेंट एवं लायकोपीन भी बहुतायत मात्रा में पाये जाते हैं। खाद्य पदार्थों में प्रमुख रूप से सूप, चटनी, सलाद, सॉस एवं डिब्बाबंदी आदि में इसका उपयोग किया जाता है। टमाटर के विविध उपयोगों के कारण इसकी मांग पूरे साल रहती है। अतः किसान पूरे साल टमाटर की खेती करके अधिक लाभ कमा सकते हैं।

जलवायुः टमाटर की अच्छी पैदावार के लिए तापमान का बहुत बड़ा योगदान होता है। तापमान 18 से 27 डिग्री सेल्सियस के बीच उपयुक्त रहता है। फल लगने के लिए रात का आदर्श तापमान 15 से 20 डिग्री सेल्सियस के बीच रहना चाहिए। तापमान 35 डिग्री सेल्सियस से अधिक होने पर फल बनने की क्रिया प्रभावित होती है।

भूमिः पोषक तत्व युक्त दोमट भूमि इसकी खेती के लिए उपयुक्त रहती है। इसके लिए जल निकास की व्यवस्था होना जरुरी होता है। इसकी अच्छी पैदावार के लिए भूमि का पी.एच. मान 6–7 के मध्य होना चाहिए।

खाद एवं उर्वरकः– खाद व उर्वरकों का प्रयोग करने से पहले निकटतम कृषि विज्ञान केंद्र या जिला कृषि विभाग की मृदा प्रयोगशाला से मिट्टी की जांच करवा लेनी चाहिए। मिट्टी की जांच के अनुसार उर्वरकों का प्रयोग करना चाहिए। बुवाई से पूर्व लगभग 20–25 टन प्रति हेक्टेयर अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद का प्रयोग करना चाहिए। रासायनिक खाद का प्रयोग अनुशंसा के अनुसार तथा नाइट्रोजन की मात्रा 120 किलोग्राम, फॉस्फोरस की 100 किलोग्राम तथा पोटेशियम 80 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर के हिसाब से करनी चाहिए। नाइट्रोजन की आधी मात्रा व फॉस्फोरस एवं पोटेशियम की पूरी मात्रा खेत तेयारी के समय खेत में देनी चाहिए। नाइट्रोजन की शेष बची हुई मात्रा पौधों की रोपाई के 45 दिन बाद टॉप ड्रेसिंग के द्वारा खड़ी फसल में देनी चाहिए।

उन्नत किस्में:–

सामान्य किस्में	संकर किस्में	
पूसा सदाबहार, पूसा रोहिणी, पूसा उपहार, पूसा–120, पूसा गौरव, पूसा शीतल	सीमित बढ़ावार वाली किस्में	असीमित बढ़ावार वाली किस्में
	पूसा हाइब्रिड–1, पूसा हाइब्रिड–2, पूसा हाइब्रिड–4, पूसा हाइब्रिड–8, अविनाश–2, रश्मि, सोनाली	अर्का विकास, पूसा रूबी, सी. ओ.–2, अर्का विशाल, अर्का वरदान, बेस्ट ऑफ आल, मारग्लोब।

बीज दर एवं बुवाईः– एक हेक्टेयर क्षेत्र में फसल उगाने के लिए नर्सरी तैयार करने हेतु संकर किस्मों के लिए 200–250 ग्राम बीज तथा अन्य किस्मों के लिए 350–400 ग्राम बीज पर्याप्त होते हैं। बीज उपचार फफूंदनाशक दवा (थीरम या कैप्टान) 2.5 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज के हिसाब से करें। बीजों की बुवाई पंक्तियों में करें तथा बुवाई की गहराई 1.5 से 2.0 से.मी. रखें। यदि सम्भव हो तो क्यारियों को पुआल या सूखी घास से जमाव आने तक ढँक कर रखना चाहिए, जिससे कि क्यारियों में नमी बनी रहती है तथा बीजों का एक समान जमाव होता है।

बुवाई का समय एवं रोपाईः–

मौसम	पौधशाला में बुवाई	रोपाई का समय
शीत कालीन	जुलाई–सितम्बर	अगस्त–अक्टूबर
बसन्त कालीन	नवम्बर–दिसम्बर	दिसम्बर–जनवरी

टमाटर की सीमित बढ़वार वाली किस्मों की पंक्ति से पंक्ति की दूरी 60 से.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 45 से.मी. रखनी चाहिए जबकि असीमित बढ़वार वाली किस्मों की पंक्ति से पंक्ति की दूरी 90 सेमी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 60 सेमी. रखना चाहिए। पौध रोपाई का कार्य शाम के समय में करना चाहिए तथा रोपाई के तुरन्त बाद हल्की सिंचाई कर देना चाहिए।

खरपतवार नियन्त्रणः टमाटर की अच्छी बढ़वार के लिए प्रारम्भिक अवस्था में खरपतवार नियंत्रण अत्यधिक महत्वपूर्ण है। पहली दो सिंचाई के बाद हल्की निराई गुड़ाई करनी चाहिए। रासायनिक खरपतवार नियन्त्रण के लिए पेन्डीमिथेलीन (30 ई.सी.) 400 मिली की मात्रा प्रति एकड़ को 200 ली. पानी में रोपाई से पहले छिड़काव करें।

तुड़ाई व उपजः– फलों को दूर वाले स्थानों पर भेजने के लिए फल का रंग लाल होने से पहले तथा स्थानीय बाजार में भेजने के लिए फलों का रंग लाल होने के बाद इनकी तुड़ाई करें। टमाटर की फसल रोपाई से 75 से 100 दिनों में तुड़ाई के लिए तैयार हो जाती है। टमाटर की उपज किस्मों, उगाये गए मौसम, प्रबंधन क्रियायें आदि पर निर्भर करती है। अगर इन किस्मों की बुवाई समय पर की गयी हो व कीट एवं बीमारियों का प्रबंधन अच्छे से किया गया हो तो संकर किस्मों की उपज लगभग 45–55 टन प्रति हेक्टेयर तथा साधारण किस्मों की उपज 20–25 टन प्रति हेक्टेयर तक हो जाती है।

रोग व कीट प्रबन्धन

टमाटर का आर्द्र पतनः– यह एक कवक रोग है जो सभी प्रकार की मिट्टी में हो सकता है। प्रभावित पौध उगने से पहले या तुरंत बाद गिर कर खत्म हो जाती है। भूमि की सतह के पास पौध के तने पर भूरे रंग के जलीय तथा नरम धब्बे बनते हैं। पत्तियों का पीला पड़ना और मुरझाकर सूख जाना इस रोग की मुख्य पहचान है। नर्सरी में खाली स्थान दिखाई देने लगते हैं।

प्रबंधन

- उचित नर्सरी की तैयारी तथा अच्छा जल निकास प्रबंधन से इस बीमारी को कम किया जा सकता है।
- अंकुरण के लिए छिड़काव विधि का उपयोग करके तथा पानी के बेहतर नियंत्रण रखने से संक्रमण की संभावना कम हो जाती है।
- ट्राइकोडर्मा विरडी (4 ग्राम/किग्रा) या स्यूडोमोनास (10 ग्राम/किग्रा) से बुवाई से 24 घंटे पहले बीज को उपचारित करें।
- स्यूडोमोनास फ्लूओरेसेंस को गोबर की खाद के साथ (5 किलो/50 किलो प्रति हेक्टेयर) मिश्रित कर मिट्टी में मिलायें।
- कॉपर ओक्सीक्लोराइड (2.5 ग्राम/लीटर) से क्षेत्र को भिगोयें।
- बीज को ब्लाइटाक्स (2.5 ग्राम/लीटर) बीज को उपचारित करें। बुवाई के एक सप्ताह पूर्व पुआल व अन्य घास–फूस नर्सरी में डालकर जला देने से आर्द्र पतन का प्रकोप कम हो जाता है।
- पौधशाला की क्यारी भूमि से ऊपर उठी होनी चाहिए जिससें पानी के ठहराव से बचाव हो सके।

पछेती अंगमारीः– पत्ते पर पछेती अंगमारी के लक्षण सबसे पहले छोटे, पानी से लथपथ जैसे दिखाई देते हैं जो तेजी से बैंगनी–भूरे रंग, तेल जैसे दिखने वाले धब्बों के रूप में दिखाई देते हैं। संक्रमित फल भूरे रंग का हो जाता है लेकिन माध्यमिक क्षय जीवों से संक्रमित रहते हैं। आमतौर पर लक्षण फल के ऊपरी भाग से शुरू होकर भूमि की तरफ बढ़ता है। इसकी रोकथाम के लिए डाइथेन एम–45 (2.5 ग्रा/लीटर) या क्लोरोथोलोनिल 25 ड्ब्ल्यू पी (कवच) का 2 ग्रा/लीटर या डाइमेथोमोर्फ 50 ड्ब्ल्यू पी (एक्रोबेट) 1.0 ग्रा/लीटर का छिड़काव करना चाहिए।

पर्ण कुंचन (लीफ कर्ल)ः– यह टमाटर की प्रमुख बीमारी है जिसमें पत्तियां नीचे की तरफ मुड़कर ऐठ जाती हैं। रोगग्रस्त पत्तिया छोटी, मोटी एवं खुरदरी हो जाती हैं। पत्तियों का रंग पीला पड़ जाता है। इस बीमारी के भयानक रूप धारण करने पर आमतौर पर संक्रमित पौधों पर गठित फूल विकसित नहीं हो पाते हैं और नीचे गिर जाते हैं। इसकी रोकथाम के लिए सभी संक्रमित पौधों को निकाल देना चाहिए और आगे फैलने से बचने के लिए इन्हें नष्ट कर देना चाहिए। मेटासिस्टाक्स या डाइमेथोएट जैसे प्रणालीगत कीटनाशक का 2 मिली/लीटर की दर से कीट वेक्टर, सफेद मक्खी को मारने के लिए छिड़काव करना चाहिए। कोन्फिड़ोर 200 एस.एल. 100 मि.ली./500 लीटर पानी में घोल बनाकर रोपाई के 3 सप्ताह बाद तथा आवश्यकतानुसार 15 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करें।

सफेद मक्खीः– इस कीट के शिशु व वयस्क दोनों ही पत्तों से रस चूसते हैं। इनके द्वारा बनाये गए मधु बिन्दु पर काली फफूंद आ जाती है जिससे पौधे का प्रकाश संश्लेषण कम हो जाता है। यह कीट वायरस जनित ''पत्ती मोड़क'' (लीफ कर्ल) बीमारी भी फैलाता है। इसकी रोकथाम के लिए रोपाई से पहले पौधों की जड़ों को आधे घंटे के लिए इमिडाक्लोप्रिड 1 मि.ली./3 लीटर के घोल में डुबोएं तथा बाद में आवश्यकता पड़ने पर छिड़काव करें। नर्सरी को 40 मेस की नायलॉन नेट से ढ़क कर रखें तथा पीली कीट चिपकने वाली ट्रैप का प्रयोग करें।

टमाटर फल छेदकः– इस कीट की सूंडियां फलों में छेद करके फलों के गूदे को खा जाती हैं। ये कीट फलों से आधे बाहर लटके हुए नजर आते हैं। फल पर किए गए छेद गोल होते हैं और केवल छेद के अंदर ऊपरी हिस्से को ही ये कीट खाते हैं। इसकी रोकथाम के लिए टमाटर की प्रति 16 पंक्तियों पर ट्रैप फसल के रूप में एक पंक्ति गेंदे की फसल लगाएं।

सूंडियों वाले फलों को इकट्ठा कर नष्ट कर दें। इस कीड़े की निगरानी के लिए 20 फेरोमोन ट्रैप प्रति हेक्टेयर लगाएं। जरूरत पड़ने पर नीम बीज अर्क (5 प्रतिशत) या एन.पी.वी. 250 एल. ई./हेक्टेयर या बी.टी 1 ग्राम/लीटर पानी या इमामेक्टिन बेन्जोट 5 एस.जी. 1 ग्राम/2 लीटर पानी में या फ्लूबेंडिएमाइड 20 डब्ल्यू जी 5 ग्रा/10 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

पत्ती सुरंगक कीट (लीफ माइनर): इस कीट के शिशु पत्तों के हरे पदार्थ को खाकर इनमें टेढ़ी–मेढ़ी सफेद सुंरग बना देते हैं इससे पौधों का प्रकाश संश्लेषण कम हो जाता है। अधिक प्रकोप होने से पत्तियां सूख जाती हैं। इसकी रोकथाम के लिए ग्रसित पत्तियों को निकालकर नष्ट कर दें। डाइमेथाएट 2 मिली./लीटर या इमिडाक्लोप्रिड 1 मि.ली./3 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

रबी ऋतु में उगाई जाने वाली सब्जियों के मूल्य संवर्धन के लिए विभिन्न उपाय

लीना शरणागत एवं डा. दीपक कुमार मिश्रा

चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कानपुर–208002

रबी ऋतु में उगाई जाने वाली सब्जियों के मूल्य संवर्धन के लिए विभिन्न उपाय किए जा सकते हैं, जो न केवल उपज की गुणवत्ता और मात्रा को बेहतर बनाते हैं, बल्कि बाजार में उनकी कीमत भी बढ़ा सकते हैं। यहाँ कुछ महत्वपूर्ण उपाय दिए गए हैं:

1. गुणवत्ता नियंत्रण

- **बीज चयनः** उच्च गुणवत्ता वाले बीज का चयन करें और सुनिश्चित करें कि मृदा की स्थिति और पोषण स्तर सब्जियों की बढ़त के लिए उपयुक्त हो। बीज की सही किस्म चुनें जो रबी मौसम की परिस्थितियों के अनुकूल हो।
- **सिंचाईः** नियमित और सही समय पर सिंचाई करें ताकि सब्जियों को आवश्यक नमी मिलती रहे, जिससे उनकी गुणवत्ता बनी रहे। ड्रिप सिंचाई जैसी तकनीकों का उपयोग करें ताकि पानी की मितव्ययिता हो और जड़ों को उचित नमी मिले।
- **कीट और रोग नियंत्रणः** कीटों और रोगों की नियमित निगरानी करें और सही कीटनाशक तथा रोगनाशक का उपयोग करें।

  रोग प्रतिरोधी किस्मों का चयन करें और आवश्यकतानुसार फसल चक्र अपनाएं।
- **मृदा की तैयारीः** अच्छे जल निकासी के लिए मृदा की उपयुक्त तैयारी करें और उसे भुरभुरा बनाएं। मृदा का सही स्तर बनाए रखें (आमतौर पर 6.0–7.0)।
- **खाद और पोषक तत्वः**
  - ➢ संतुलित खाद का उपयोग करें और मृदा की पोषक तत्वों की कमी की जांच करें।
- **पारिस्थितिकीय नियंत्रणः**

  मौसम की निगरानी करें और आवश्यकतानुसार मौसम की परिस्थितियों के अनुसार कृषि तकनीकों का पालन करें।

2. कटाई और संग्रहणः

सब्जियों को उचित परिपक्वता पर काटें, न कि बहुत जल्दी या बहुत देर से।

3. पैकेजिंग और ब्रांडिंग

उत्तम पैकेजिंगः सब्जियों को ताजगी बनाए रखने और आकर्षक दिखाने के लिए उपयुक्त पैकेजिंग का उपयोग करें। प्लास्टिक, जूट या कागज की पैकेजिंग कर सकते हैं जो उत्पाद की उम्र बढ़ाए और ग्राहक को आकर्षित करें।

ब्रांडिंगः सब्जियों के लिए एक प्रभावशाली ब्रांड नाम और लोगो विकसित करें। इससे आपके उत्पाद को पहचान मिलती है और ग्राहक उसकी गुणवत्ता पर विश्वास करते हैं।

4. प्रोसेसिंग और मूल्य वर्धन

कैंटिंग और फ्रीजिंगः सब्जियों को कैंट या फ्रीज करके उनका दीर्घकालिक उपयोग सुनिश्चित करें। यह उन्हें बाजार में लंबे समय तक बनाए रखने में मदद करता है।

विविधित उत्पादः सब्जियों से मूल्य वर्धित उत्पाद जैसे कि सॉस, जूस, सूप, अचार, और स्नैक्स तैयार करें।

5. विपणन और वितरण

- ➢ **स्थानीय बाजारों में बिक्रीः** स्थानीय बाजारों और मंडियों में उत्पादों की बिक्री बढ़ाएँ। यह ताजगी बनाए रखने में मदद करता है और परिवहन लागत को कम करता है।
- ➢ **ऑनलाइन विपणनः** ई–कॉमर्स प्लेटफॉर्म पर सब्जियों की बिक्री करें। इससे एक बड़े ग्राहक आधार तक पहुंचा जा सकता है और उत्पाद की बिक्री बढ़ सकती है।

6. उन्नत कृषि तकनीकें

- ➢ **स्मार्ट खेतीः** ड्रिप सिंचाई, उन्नत उर्वरक उपयोग, और आधुनिक कृषि तकनीकें अपनाएं ताकि सब्जियों की उत्पादकता और गुणवत्ता में सुधार हो सके।

- **सतत कृषिः** जैविक खेती और सतत कृषि विधियों को अपनाएं ताकि उत्पादों की गुणवत्ता को बढ़ाया जा सके और भूमि की उर्वरता को बनाए रखा जा सके।

7. प्रशिक्षण और शिक्षा

- **किसान प्रशिक्षणः** किसानों को सब्जियों के मूल्य संवर्धन पर प्रशिक्षण दें, जिसमें बेहतर पैकेजिंग, प्रोसेसिंग और विपणन तकनीकें शामिल हों।
- **सहयोग और नेटवर्किंगः** अन्य किसानों और उद्योग विशेषज्ञों के साथ नेटवर्किंग करें और उनके अनुभवों और तकनीकों को अपनाएं।

इन उपायों को अपनाकर रबी ऋतु की सब्जियों के मूल्य संवर्धन में सुधार किया जा सकता है, जिससे किसानों को बेहतर लाभ प्राप्त हो सकता है।

गेंदा की उत्पादन तकनीक

डा. आई.पी. सिंह, डा. खलील खान एवं डा. दीपक मिश्रा

चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर एवं दीपक यादव, चौ. चरण सिंह कृषि विश्वविद्यालय, मेरठ

किसान भाइयों मौलिक रूप से गेंदा (टैगोटिस प्रजातियां) मध्य तथा दक्षिणी अमेरिका विशेषकर मैक्सिको का निवासी है। देश के विभिन्न भागों में इसकी खेती बड़े पैमाने पर होती है और व्यापारिक दृष्टि से यह बहुत ही अच्छा फूल है। गेंदा में एंटीबैक्टीरियल और एंटीवायरल गुण होते है, जो इसे खास बनाते है। गेंदा एस्टेरसी परिवार से सम्बन्धित है। गेंदे की विभिन्न ऊँचाई एवं विभिन्न रंगों की छाया के कारण भूदृश्य की सुन्दरता बढ़ाने में बड़ा महत्व है। इसकी खेती वर्ष भर की जा सकती है। कीड़ों को दूर रखने में भी मदद करता है। गेंदे के फूलों में जीवाणुरोधी, एंटीवायरल, एंटीफंगल, और इम्यूनो उत्तेजक गुण पाए जाते हैं, जो आंखों के संक्रमण को कम करने के साथ–साथ आंखों की सूर्य की किरण ों से भी बचाव करते हैं। गेंदा का फूल पवित्रता, शुभता और दिव्यता का प्रतीक है।

जलवायु– गेंदे के पौधे काफी सहिष्णु होते है। ये उष्ण कटिबंधीय एवं उपोष्ण जलवायु वाले भागों में वर्ष भर सफलता पूर्वक उगाये जा सकते है। गेंदे के पौधों के लिये धूप वाली जगह उपयुक्त होती है, छायावाली नहीं।

मिट्टी एवं उसकी तैयारीः गेंदे की सफल खेती के लिये बलुई दोमट मिट्टी सर्वोत्तम है। पी.एच. 7–7.5 हो तथा जिसमें वायु संचार एवं जल निकास का उचित प्रबन्ध हो बहुत ही उपयुक्त होती है। भूमि तैयार करते समय अच्छी तरह सड़ी हुई गोबर की खोद 12 टन प्रति एकड़ के हिसाब से भूमि में मिलना आवश्यक होता है।

प्रजातियाँ–

1. **अफ्रीकी गेंदा (टैगेटिस इरेक्टा):** आमतौर पर अफ्रीकी गेंदे के पौधे काफी लम्बे (80–100 से.मी.) होते है। इनकी पत्तियाँ चौड़ी होती है तथा फूल पीले नारंगी तथा सफेद रंग वाले एवं गोलाकार होते है। इनके फूलों का आकार 6–9 से.मी. होता है। अफ्रीकी गेंदा दो प्रकार के होते है। (क) कारनेखन के समान फूल वाले तथा (ख) गुलदाउदी के समान फूल वाले। मुख्यतः कारनेशन के समान फूल वाले नारंगी रंग की किस्में व्यापारिक दृष्टि से बहुत ही महत्वपूर्ण होती है।

मुख्य किस्में–

पूसा नारंगी– यह किस्म बोने से फूलने तक 125–135 दिन लेती है। इसके पौधे औसतन 75 से.मी. ऊँचे तथा स्वस्थ होते हैं। इसके फूलों का व्यास 7–8 से.मी. होता है। ताजे फूलों की उपज 140–150 क्विंटल प्रति एकड़ होती है। यह माला बनाने तथा धार्मिक अनुष्ठानों के लिये अति उत्तम किस्म है। इसके फूलों से जैन्थोफिल निकाल कर कैप्सूल के रूप में मुर्गी दाने के साथ खिलाने से अंडे की जर्दी का रंग अधिक पीला हो जाता है जिसके कारण बाजार मूल्य अधिक मिलता है।

पूसा बसंती– यह किस्म बीज बोने से फूलने तक 135–145 दिन लेती है। पौधे 50–60 से.मी. ऊँचे तथा स्वस्थ होते है। फूल गंधक के समान पीले रंग के, बहुपंखड़ियों तथा 6–7 से. मी. व्यास वाले होते है। एक पौधे पर लगभग 60 पुष्प आते है। पुष्पोत्पादन की अवधि 40–45 दिन है। यह किस्म गृहों उद्यानों, गमलों, क्यारियों तथा व्यापारिक खेती के लिये अति उपयुक्त होती है।

2. **फ्रांसीसी गेंदा** (टैगेटिस पेटूला) इसके पौधे 20–60 से.मी. की ऊँचाई तक बढ़ते हैं। इन्हें आम भाषा में जाफरी भी कहते हैं। इसके फूलों का आकार 3–5 से. मी. होता है। फूल पीले नारंगी, मटियाले चित्तीदार लाल या इनके मिश्रित रंग के होते है।

3. **जंगली गेंदा** (टैगेटिस माइनूटा) इनके पौधे लगभग 130–150 से. मी. लम्बे होते है। फूल लौंग के समान हल्के पीले रंग वाले गुच्छों में तथा अधिक संख्या में होते है। सुगन्धित तेल निकालने के लिये पूरा पौधे उपयोग किया जाता है।

मुख्य अन्य किस्में– डैन्टी मेरिटा, नौटी मैरिटा, सन्नी, बोनीटा, बटर स्कॉच, डबल हारमोनी, लेमन ड्राप, मिलोडी, पिटाइट, हारमोनी पिटाइट ओरंज, पिटाइट येलो, रेड ब्रोकेड, रस्टीरेड, टैन्जोरिन येलो, पिगमी।

पौधे तैयार करना नर्सरी तैयार करने हेतु भूमि को अच्छी तरह से 30–40 से. मी. गहरी खोद लेना चाहिए तथा उसमें पत्ती की सड़ी खाद या गोबर की सड़ी हुई खाद मिलाकर मिट्टी को भुरभुरी बना लेना चाहिए। इसके बाद नर्सरी के लिये क्यारियां 15 से.मी. ऊँची, 1 मीटर चौड़ी तथा 5–7 मीटर लम्बी बनाते है। एक एकड़ क्षेत्रफल के लिये 300 ग्राम बीज की मात्रा पर्याप्त होती है। क्यारियाँ तैयार होने के बाद बीज को 6–8 से.मी. की दूरी पर तथा 2 से.मी. की गहराई पर बोते है। इसके बाद बीजों को अच्छी तरह छनी हुई गोबर या पत्ती की खाद को हल्की परत से ढक देते है। नर्सरी में महीन हजारे से रोजाना पानी का छिड़काव करना चाहिए । यदि बीज स्वस्थ है तो वे 5–6 दिनों में उग आते है। वर्षा कालीन फसल के लिये बुवाई मई–जून मे करना उचित रहता है।

पौधों को क्यारियों में लगाना– आमतौर पर बीज बुवाई के एक महीने बाद पौधों को नर्सरी से निकालकर क्यारियों में लगा दिया जाता है। अफ्रीकी गेंदे को 40×40 से.मी. की दूरी पर तथा फ्रांसीसी गेंदे को 30×30 से. मी. की दूरी पर लगाते है। अफ्रीकी गेंदे में पौधे रोपने के बाद एक–एक महीने के अन्तराल पर दो बार पौधों की चोटी की कलिकाओं को दो–तीन पत्तियों सहित हाथ से तोड़ देना चाहिए। इस समय में यदि कोई मुख्य कलिका बन जाए तो उसे भी मोड़ देना चाहिए। ऐसा करने से पार्श्व शाखाओं की संख्या बढ़ जाएगी जिससे फूलों की संख्या भी बढ़ जाएगी।

खादः– अच्छी फसल के लिये 60 कि. ग्रा. नाइट्रोजन, 30 कि.ग्रा. फास्फोरस तथा 30 कि.ग्रा. पोटाश प्रति एकड़ की दर से देना चाहिए। फास्फोरस एवं पोटाश की पूर्ण मात्रा भूमि तैयार करते समय तथा नाइट्रोजन की आधी मात्रा पौधों को क्यारियों में लगाने के एक महीने बाद एवं बाकी आधी मात्रा दो महीने बाद लगानी चाहिए।

सिंचाईः– वर्षा के दिनों में पौधों की सिंचाई आवश्यकतानुसार की जाती है।

फूल उत्पादन का समय एवं फूलों को तोड़नाः– वर्षा कालीन फसल सितम्बर के मध्य से फूलों का उत्पादन आरम्भ हो जाता है। फूलों को पूरा खिलने पर ही तोड़ना चाहिए। जहाँ तक संभव हो फूलों को प्रातःकाल या सायंकाल ही तोड़ना चाहिए और तोड़कर ठण्डे स्थान में एकत्र करना चाहिए उसके पश्चात उन्हें बास की टोकरियों में भरकर बाजार में भेज देना चाहिए।

फूलों की उपजः– अफ्रीकी गेंदे की ताजे फूलों की उपज 10 टन प्रति एकड़ होती है। जबकि फ्रांसीसी गेंदे के तो फूलों की उपज 5 टन प्रति एकड़ होती है।

कीट एवं व्याधियाँः– गेंदे में लाल रंग की जाल बनाने वाली मकड़ी पौधों का रस चूसकर हानि पहुंचाती है। इसे 0.1 प्रतिशत डाइकोफाल के घोल को पौधों पर छिड़कर नियंत्रित किया जा सकता है। चूर्णी फफूंद, रतुआ (त्नेज) तथा विषाणु (वाइरस) गेंदे की मुख्य बीमारियां है। चूर्णी फफूंद तथा रतुआ को 0.2 प्रतिशत घुलनशील गंधक के घोल का छिड़काव करने से नियंत्रित किया जा सकता है। कीटनाशक दवाओं जैसे मैटास्टिक्स (0.2 प्रतिशत) या इमिडाक्लोरप्रिड (0.1 प्रतिशत) का घोल का 10 से 15 दिन के अन्तर पर छिड़काव करने से विषाणु बीमारियों फैलाने वाले कीटों को नियंत्रण में रखा जा सकता है।

सब्जी फसलों के प्रमुख रोग एवं उनका एकीकृत प्रबन्धन

डा. भूपेन्द्र कुमार सिंह, डा. वी.के. कनौजिया, डा. एम.के. सिंह एवं सोहन लाल वर्मा

चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कानपुर

सब्जी उत्पादन में भारत, चीन के उपरान्त विश्व का दूसरा सबसे बड़ा सब्जी उत्पादक राष्ट्र है और विश्व उत्पादन का 15 प्रतिशत हिस्सा भारत में है। देश में बढ़ती हुई जनसंख्या की पोषण तथा स्वास्थ्य सुरक्षा सुनिश्चित करने हेतु सब्जियों का उत्पादन तथा उत्पादकता को बढ़ाने की महती आवश्यकता है। सब्जी उत्पादन की व्यापक क्षमता हासिल करने में अनेक कीट नाशीजीवों, बीमारियों, सूत्र–कृमियों तथा कुटकी के प्रकोप के कारण होने वाला उच्च आर्थिक नुकसान एक प्रमुख बाधा है। सब्जियों में नाशीजीव प्रकोप के कारण 30–40 प्रतिशत तक पैदावार का नुकसान होता है जिससे प्रतिवर्ष करोड़ों रुपये की हानि होती है। नुकसान को कम करने और इन नाशीजीवों का नियंत्रण करने के उद्देश्य से किसान सामान्यतया रासायनिक दवाईयों का अंधाधुंध छिड़काव करते हैं जिससे रसायनों के अवशेष फसल उत्पादों पर बने रह जाते हैं व जिसके कारण पर्यावरण तथा स्वास्थ्य को अत्यधिक नुकसान होता है। इन कीटों एवं बीमारियों के नियंत्रण हेतु जीवनाशी रसायनों के अनियन्त्रित तथा अविवेकपूर्ण प्रयोग से मानव व पर्यावरण को गम्भीर खतरा उत्पन्न हो रहा है तथा कीटों एवं बीमारियों में इन रसायनों के प्रति प्रतिरोधक क्षमता उत्पन्न हो रही है। अतः इनके नियन्त्रण हेतु एकीकृत नाशीजीव प्रबन्धन पर विशेष ध्यान देना आवश्यक हो जाता है। सब्जी फसलों में लगने वाले प्रमुख, रोग एवं उनका एकीकृत प्रबन्धन निम्नवत् हैः–

1. टमाटर के प्रमुख रोग

आर्द्र–पतन (Damping off) : Causal organism: *Pythium aphanidermatum***:** यह रोग एक भूमि जनित रोग है। जो *पिथियम* नामक फफूंद के द्वारा होता है। इसे पौध गलन रोग भी कहते हैं। नर्सरी में भूमि की सतह पर पौधों का कालर रिजन से अचानक गिरना और गलना इसका प्रमुख लक्षण है। इस बीमारी के कारण पौधे नर्सरी में ही अचाानक सूख जाते हैं और जो बच भी जाते है वह भी कुछ दिनों में सूखने लगते हैं।

अगेती झुलसा (Early Blight): Causal organism: *Alternaria solani***:** यह एक फंफूद जनित रोग है जो कि *Alternaria* नामक कवक से होता है। इस रोग के लक्षण सूखे मौसम में दिखाई पड़ते हैं। इस रोग के लक्षण निचली पत्तियों पर छोटे–छोटे, हल्के भूरे रंग के धब्बों के रूप में दिखाई पड़ते हैं, बाद में ये ऊपर की पत्तियों पर भी फैलने लगते हैं।

पिछेता झुलसाः (Late Blight): Causal organism: *Phytophthora infestans***:** यह बीमारी टमाटर में लगने वाली बीमारियों में सबसे ज्यादा घातक होती है। इस रोग के लक्षण सर्वप्रथम पत्तियों पर छोटे–हल्के पीले रंग के अनियमित आकार के धब्बों के रूप में दिखाई पड़ते हैं। जो बाद में बहुत तेजी से पूरे पौधो पर फैल जाते हैं और आपस में मिल जाते है जिससे पूरा पौधा कुछ ही दिन में समाप्त हो जाता है। यह बीमारी आर्द्रता अधिक होने पर ज्यादा लगती है।

फल विगलन : (Fruit Rot): Causal organism: *Phytophthora parasitica***:** यह रोग *फाइटोप्थोरा* नामक फफूंद के कारण होता है। टमाटर के फल पर हल्के पीले सकेन्द्र वलय धब्बें बनते है जो बाद में बड़े होकर पूरे फल पर फैल जाते हैं। इसमें फल का छिलका नहीं गलता है लेकिन फल के भीतर तक गूदा बदरंग हो जाता है।

पर्ण–कुंचनः (Leaf curl): Causal organism: *Virus***:** यह टमाटर की एक प्रमुख बीमारी है। यह रोग टमाटर में एक विषाणु द्वारा होता है। संक्रमित पौधों की पत्तियां मुड़ जाती हैं तथा पौधों की वृद्धि रूक जाती है। नई पत्तियों में हल्का पीला रंग दिखाई पड़ता है इस बीमारी में पौधों की पत्तियां छोटी, अन्दर की ओर मुड़ी हुई एवं एक गुच्छे में दिखाई देती है। अधिक संक्रमण होने पर पौधा बौना और झाड़ीनुमा दिखाई देने लगता है व इसमें फल न के बराबर रह जाती है।

जीवाणु धब्बाः पत्ती पर पानी से भीगे धब्बे हरित पीले रंग के आवरण के साथ दिखाई देते हैं। बाद में ये धब्बे भूरे रंग व विकृत रूप के दिखाई देते हैं। पके हुए फलों पर ये धब्बे गहरे पानी से भीगे हुए भूरे रंग से काले भूरे रंग के दिखाई देते हैं व बाद में इन धब्बों पर दरारें विकसित हो जाती हैं।

मूल–ग्रन्थि रोगः (Root knot): Causal organism: *Meloidogyne javanica***:** यह रोग एक सूत्रकृमि मेलॉइडोगाइन के कारण होता है।

इसमें जड़ों में गाठें पड़ जाती हैं। रोगी पौधे बौने रह जाते हैं यह एक सूक्ष्म मृदाजनित कृमि है जो जड़ को रोग ग्रस्त कर देता है जिससे पौधों के उपरी हिस्सों में पानी व पौषक तत्वों के पहुँचने में रूकावट होती है। प्रभावित पौधे कमजोर हो जाते हैं उनकी पत्तियाँ झुक जाती हैं व पीली हो जाती हैं और फल उत्पादकता में कमी आ जाती है। जड़ के पूर्ण विकसित न होने से पौधा सूख जाता है।

2. बैंगन के प्रमुख रोग

फोमॉप्सिस अंगमारी तथा फल विगलन **Causal organism:** *Phomopsis vexans*: यह बैंगन का गंभीर रोग है जो इसके पौधों की पत्तियों तथा फलों को संक्रमित करता है। इस रोग के लक्षण पौधों में तीन रूपों में दिखायी पड़ते हैं पत्तों पर अनियमित आकार का काला किनारा युक्त धूसर भूरा धब्बा दिखाई देता है। वृंत और तनों पर अंगमारी फैलता है और फलों पर छोटे धंसे हुए मटमैले दाग बनते हैं जो आपस में जुड़ कर विगलित क्षत बनाते हैं।रोग की वृद्धि के लिए आर्द्र मौसम तथा 26° सेल्सियस तापमान अनुकूल होता है।

जीवाणु उकठा रोग **Causal organism:** *Ralastonia solonacearum*: यह रोग बैंगन में एक जीवाणु द्वारा होता है। इस रोग में पौधों की पत्तियां अचानक मुरझाकर नीचे की ओर झुक जाती हैं तथा अन्त में पूरा पौधा सूख जाता है। संक्रमित पौधों के तनों तथा जड़ों को काटकर साफ पानी भरे हुए शीशे के गिलास में डालने पर थोड़ी देर में पौधे से सफेद भूरा लसदार रस निकालता है, जिससे पानी दूधिया हो जाता है।

छोटी पत्ती रोगः **Causal organism:** *Phytoplasma*: इस रोग का प्रमुख लक्षण पौधों की पत्तियों का छोटा हो जाना है। पत्तियों का डंठल इतना छोटा होता है कि पत्तियां तने से चिपकी हुई दिखाई देती हैं। संक्रमित पौधों की पत्तियां संकरी, मुलायम, चिकनी तथा पीले रंग की हो जाती हैं। नव विकसित पत्तियां और भी छोटी होती हैं। तने की अन्तरगांठें भी छोटी पड़ जाती हैं। अग्रस्थ कलिकाएं बड़ी हो जाती हैं लेकिन पौधों के पर्णवृन्त तथा पत्तियां छोटी ही बनी रहती हैं जिससे पौधा झाड़ी जैसा दिखाई देता है। ऐसे पौधों पर फलन बहुत कम होता है।

जड़गांठ सूत्रकृमिः **Causal organism:** *Meloidogyne spp.*: सर्वाधिक विशेष लक्षण पौधों की जड़ प्रणाली में गांठों या पुटियों का बनना है। ये पुटियां एकल या अनेक होती हैं सूत्रकृमि के प्रकोप से पौधों की बढ़वार रुक जाती है, पत्तियों का हरापन गायब हो जाता है और मुरझान के लक्षण दिखाई देते हैं। फलन भी प्रतिकूल रूप से प्रभावित होता है। प्रभावित खेत पर पौधों के धब्बे जैसे दिखाई देते हैं।

3. मिर्च के प्रमुख रोग

आर्द्र–पतन (Damping off) Causal organism: *Pythium aphanidermatum*: यह रोग एक भूमि जनित रोग है। यह रोग खराब निकासी वाली और आर्द्रता वाली भारी मिट्टी को सबसे अधिक क्षतिग्रस्त करता है। जो *पिथियम* नामक फफूंद के द्वारा होता है। इसे पौध गलन रोग भी कहते हैं। नर्सरी में भूमि की सतह पर पौधों का कालर रिजन से अचानक गिरना और गलना इसका प्रमुख लक्षण है। इस बीमारी के कारण नए पौध अचाानक सूख जाते हैं और जो बच जाते है ऊतकों के नष्ट होने के कारण वह भी कुछ दिनों में मर जाते हैं।

श्यामवर्ण तथा फल विगलन (एन्थ्रेक्नोज और फ्रूटरॉट)ः Causal organism**:** *Colletotrichum capsici* इस रोग का प्रमुख लक्षण पौधों की शाखाओं का ऊपरी भाग सूखना है और रोग ऊपर से नीचे की तरफ बढ़ता है। रोगी शाखाओं की पत्तियाँ गिरने लगती हैं। फलों के ऊपर रोग के लक्षण छोटे–छोटे, काले धंसे हुऐ और गोल धब्बों के रूप में दिखाई पड़ते हैं। फलों पर काली चित्ती दिखाई देते हैं। अनेक चित्तियों वाले फल पकने से पहले ही गिर जाते हैं जिसके परिणामस्वरूप उपज का भारी नुकसान होता है। रोग के लक्षण अधिकांशतः पके हुए फलों पर दिखाई देते हैं और इसलिए इस रोग को पके हुए फलों का सड़न भी कहा जाता है।

मोजैक तथा पर्ण कुंचन (मोजैक एड लीफ कर्ल)ः **Causal organism:** *Virus*: यह रोग मिर्च में एक विषाणु द्वारा होता है। इस रोग को सफेद मक्खी एक पौध से दूसरे पौधे तक फैलाती है। रोगग्रस्त पत्तियों पर छोटे–छोटे पीले रंग के चितकबरे धब्बे बनते हैं। पत्तियों का रंग पीला पड़ जाता है। इस विषाणु के कारण पत्तियों का आकार छोटा हो जाता है, जिससे पौधे बौने दिखाई देने लगते हैं। रोग बढ़ने की अवस्था में पौधों की बढ़वार रुकी हुई दिखाई देती है और पौधा झाड़ी जैसा दिखाई देने लगता है व फल छोटे आकार के पैदा होते हैं।

चूर्णिल फंफूदः **Causal organism:** *Fungus*: यह मिर्च में बहुत आम रोग है। रोग शुष्क और आर्द्र दोनों प्रकार के मौसम स्थितियों के तहत गर्म जलवायु में पैदा होता है। पत्तियों की ऊपरी सतह पर हरिमाहीन धब्बे दिखाई देने

लगते हैं। पत्तियों की निचली सतह पर धब्बे सफेद से धूसर चूर्णिल बढ़वार से ढक जाती हैं। यह रोग पुरानी से नई पत्तियों की ओर बढ़ता है और पर्ण–समूह का झड़ना इसका सबसे प्रमुख लक्षण है।

फ्यूजेरियम उकठा रोगः Causal organism: *Fusarium oxysporum* f. sp. *capsici*: यह रोग अधिकांशतः खराब पानी निकासी वाली मृदाओं में होता है पौधे के मुरझाने तथा पत्तियों के ऊपरी तरफ और अंदर की तरफ मुड़ने से फ्यूजेरियम मुरझान का पता चलता है। पत्तियां पीली होकर मर जाती हैं। सामान्यतः यह रोग खेत के नीचे वाले पानी रुकने वाले क्षेत्रों में दिखाई देता है और जल्दी ही सिंचाई के साथ पानी की नाली के साथ फैल जाता है। उपरोक्त समय तक जब भूमि के ऊपर लक्षण दिखाई देने लगते हैं तब तक पौधे की संवहनी प्रणाली विशेष रूप से निचले तने और जड़ें भी विरुपित होने लगते हैं।

4. सब्जी मटर के प्रमुख रोगः

चूर्णिल आसिताः यह एक फफूंद जनित रोग है। इस रोग का कारक *एरीसाइफी पॉलीगोनी* नामक कवक होता है। रोगी पौधों के सारे हरे भाग कवक के सफेद चूर्ण धूल से ढ़क जाते हैं। बाद में पूरा पौधा भूरा होकर सूख जाता है। जब वातावरण में आपेक्षित आर्द्रता अधिक बढ़ जाती है तथा बादलों वाला मौसम होता है तो इस रोग का प्रकोप अधिक तेजी से फैलता है।

रतुआः यह भी एक कवक जनित रोग है जो कि *यूरोमाइसीज फेवी* नामक कवक से होता है। रोगी पौधों की पत्तियों, तनों, पर्ण वृंतों और फलियों पर पीले से नारंगी रंग के फफोले बनते हैं। बाद में इनका रंग भूरे से काला हो जाता है।

फ्यूजेरियम मुरझानः यह रोग *फ्यूजेरियम* नामक कवक द्वारा फैलता है। निचले पत्ते पीले पड़ जाते हैं। रोगी पौधे का मुख्य शीर्ष झुक जाता है तथा निचले तने का संवहन बण्डल पीला नारंगी या काला भूरा रंग का हो जाता है। यह कवक पौधों में पानी व खाद्य पदार्थों का संचरण रोक देता है, पौध की वृद्धि रुक जाती है और धीरे–धीरे पूरा पौधा सूख जाता है। इस रोग का मुख्य लक्षण पत्तियों का क्रमिक या आकस्मिक रूप से पीला पड़ना, मुरझाना और फिर सूख जाना है। इस रोग से ग्रसित पौधों की जड़ें तथा तना गहरे रंग के हो जाते हैं तथा जड़ से लेकर तने तक काले रंग की धारियाँ पाई जाती हैं। जलभराव वाले क्षेत्र में यह रोग अधिक लगता है।

मृदुरोमिल आसिताः रोग कारक कवक *पेरोनोस्पोरा पीसी* कवक द्वारा फैलता है। वृन्तों, तनों, पत्तों के ऊपर गोल या लम्बे भूरे या पीले धब्बे दिखाई देते हैं। ठण्ड और नम मौसम में पत्तियों के नीचे धूसर बैंगनी या सफेद रोयेंदार प्रवर्धन बनता है। पौधा बौना और विकृत आकार ले लेता है। फलियों पर अण्डाकार फीके हरे धब्बे बनते हैं। जो बाद में भूरा रंग ले लेते हैं।

समेकित प्रबन्धनः

- ❖ गर्मी की गहरी जुताई करने से उसमें मौजूद हानिकारक रोगों के रोगाणु नष्ट हो जाते हैं।
- ❖ रोगरोधी प्रजातियों व प्रमाणित बीज का चुनाव करना चाहिये।
- ❖ फसल–चक्र के साथ–साथ जल–निकास की व्यवस्था करना चाहिये।
- ❖ परभक्षी व परजीवी को बाहर से लाकर खेत में छोड़ना चाहिये।
- ❖ खेतों में प्रकाश प्रंपच लगाकर कीड़ों को नष्ट करना चाहिये।
- ❖ चिड़ियों के बैठने के लिये बांस पर लकड़ियाँ बाँधकर खेत के बीच में लगाना चाहिये।
- ❖ रोग ग्रसित पौधों को नष्ट कर देना चाहिये।
- ❖ नर्सरी की स्थापना के लिए ऐसे स्थान का चयन करे जहाँ पर पानी का जमाव न होता हो इससे जड़ सडन जैसे कई रोगों से बचाव किया जा सकता है। मोटी चादर से क्यारी को ढक कर रखने से भी भूमि जनित रोग से निदान मिलता है। नर्सरी को कापर आक्सीक्लोराइड 3 ग्राम प्रति लीटर की दर से पानी में घोलकर उपचारित करना चाहिए।
- ❖ नर्सरी की बुआई से पहले प्रति वर्ग मीटर अनुसार *ट्राइकोर्डमा हरजीनियम* की 50 ग्राम मात्रा को 1 किग्रा. सड़ी हुई गोबर की खाद में अच्छी प्रकार मिलाकर एक सप्ताह के लिये छोड़ देना चाहिये। बाद में इसे क्यारी में अच्छी प्रकार मिला दें।
- ❖ आर्द्र–गलन एवं जड़ गलन के नियंत्रण हेतु 10 ग्रा. प्रति किग्रा. बीज ट्राइकोडर्मा या कैप्टान 75 डब्ल्यू पी के साथ (0.25 प्रतिशत) की दर से बीजोपचार करें। ट्राइकोडर्मा 1 प्रतिशत के साथ नर्सरी उपचार (400 वर्ग मी क्षेत्र का 250 ग्रा. प्रति 50 लीटर पानी की दर से), पौध जड़ उपचार (1 प्रतिशत 15 मिनट तक) करें और आवश्यकतानुसार कैप्टान

75 डब्लयुपी से 0.25 प्रतिशत की दर से मृदा उपचार करें। पौधे की रोपाई से पूर्व ट्राइकोर्डमा हरजीनियम की 40 ग्राम मात्रा 10 लीटर पानी मे मिलाकर पौधों की जड़ों को दस मिनट के लिये घोल मे उपचारित करने के बाद ही पौधों की रोपाई करना चाहिये। रोग प्रकट होने पर मैन्कोजेब (0.25%), रिडोमिल एम. जेड – 72 (3.0 ग्राम/लीटर पानी) या स्ट्रेप्टोसाइक्लिन (5 ग्राम) + ब्लाइटॉक्स (20 ग्रा.) प्रति 10 लीटर पानी की दर से आवश्यकतानुसार छिड़काव करें।

❖ अगेती एवं पछेती झुलसा के नियंत्रण हेतु मेन्कोजेब 75 डब्ल्युपी 1.5–2 किग्रा प्रति हे की दर से 750–1000 लीटर पानी के साथ सुरक्षात्मक छिड़काव करें और आवश्यकतानुसार एजोक्सीस्ट्रोबिन 23 प्रतिशत एससी का 500 मिली प्रति हे कि दर से 500 लीटर पानी के साथ प्रति हे की दर से 500 लीटर पानी के साथ मौसम और फसल अवस्थानुसार छिड़काव करें या अगेती एवं पछेती झुलसा के नियंत्रण हेतु सायमोक्सानिल 8 प्रतिशत + मेन्कोजेब 64 प्रतिशत डब्ल्यूपी 1.5 किग्रा या टयूबीकोनाजोल 50 प्रतिशत + ट्राइफलोक्साईट्रोबिन 25 प्रतिशत डब्ल्यूजी 350 ग्रा प्रति हे की दर से 500 लीटर पानी के साथ छिड़काव करें।

❖ बैक्टीरियल सूखा रोग के नियंत्रण हेतु पौध पर स्ट्रैप्टोसायक्लीन (40–100 पी पी एम) घोल का छिड़काव खेत में करें। फसल पर रोग का चिन्ह देखते ही स्ट्रेप्टोसायॅक्लीन (1 ग्राम/10 लीटर) या एग्रीमाइसीन–100 (0.6 ग्राम/लीटर) पानी के घोल का छिड़काव करना चाहिये।

❖ फोमाप्सिस प्रभावित फल और पर्ण धब्बा रोग के नियंत्रण के लिए खेत में 1.5–2.0 किग्रा प्रति हे की दर से जिनेब 75 डब्ल्यूपी 750–1000 लीटर पानी के घोल में अथवा कार्बेन्डाजिम 50 डब्ल्यूपी 300 ग्रा प्रति हे 600 लीटर पानी के घोल के साथ छिड़काव करें।

❖ बैंगन की फसल लगातार उगाने से मुर्झान रोग का संक्रमण अधिक होता है। अतः गैर सोलेनेसी प्रजाति की फसलों को अपनाते हुए उचित फसल क्रम का पालन करना चाहिए।

❖ सफेद मक्खी आदि के लिए पीले चिपचिपे फंदे या डेल्टा फंदे 2–3 प्रति एकड़ की दर से लगाए।

❖ चूसक नाशीजीवों तथा पत्ती मोड़क कीट को नियंत्रित करने के लिए एक–एक सप्ताह के अन्तराल पर एनएसकेई 5 प्रतिशत के 2–3 छिड़काव करें। रस चूसने वाले कीटों के बचाव के लिये थायोमेथोक्साम (2 ग्रा./10 ली. पानी) अथवा डेल्टामेथ्रिन (1 मि. ली./ली. पानी) का प्रयोग करना चाहिये।

❖ आवश्यकता पड़ने पर सफेद मक्खी के नियंत्रण हेतु पौध रोपण के 25 दिन पश्चात् इमीडाक्लोप्रिड 17.8 एसएल 150 मिली अथवा थिओमेथाक्सम 25 डब्ल्यू जी का 200 ग्रा अथवा स्पायरोमेसिफिन 22.9 एससी का 625 मिली अथवा डायमिथोएट 30 ईसी 990 मिली प्रति हे की दर से 500 लीटर पानी के साथ छिड़काव करें।

❖ छोटी पत्ती रोग से प्रभावित पौधों की छंटाई की जानी चाहिए।

❖ फल सड़न और डाई बैक के प्रबंधन हेतु मेन्कोजेब 75 डब्ल्यूपी अथवा प्रोपिनेब 70 डब्ल्यूपी का 1.5–2.0 किग्रा प्रति हे की दर से 750–1000 लीटर पानी के साथ या जिनेब 70 डब्ल्यूपी का 0.5 प्रतिशत की दर से सुरक्षात्मक छिड़काव व आवश्यकता आधारित डायफेनकोनाजोल 25 ईसी का 0.05 प्रतिशत अथवा केप्टान 70 प्रतिशत + हेक्साकोनाजोल 5 डब्ल्यूपी का 500–1000 ग्रा प्रति हे की दर से 500 लीटर पानी के साथ छिड़काव करें।

❖ चूर्णिल आसिता रोग का प्रकोप होने पर गंधक चूर्ण (25–30 कि.ग्रा./हे.) का बुरकाव करें। सल्फेक्स (2.0 कि.ग्रा.), कैलिक्सिन (500 मि.ली.) या कैराथेन (600 मि.ली.) का 1000 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हेक्टेयर में छिड़काव करें। छिड़काव 12–15 दिनों पर 3 बार किया जा सकता है।

❖ चूर्णिल आसिता और फल सड़न के प्रबंधन के लिए आवश्यकता आधारित हेक्सकोनाजोल 2 एससी का 3 ली प्रति हे या टेब्युक्युनाजोल 25.9 प्रतिशत एम/एम ईसी का 500 मिली का 600–700 मिली प्रति हे की दर से 500–700 लीटर पानी के साथ छिड़काव करें।

❖ डाऊनी मिल्ड्यू व ब्लाइट से बचाव के लिए जिनेब 75 डब्ल्यूपी

का 1.5–2.0 किग्रा प्रति हे की दर से 750–1000 लीटर पानी के साथ आवश्यकता आधारित छिड़काव करें।

- रतुआ रोग का प्रकोप होने मैंकोजेब (2.5 कि.ग्रा.), या कैलेक्सिन (500 मि.ली.) 1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर 10–12 दिनों के अन्तराल पर डालें।
- मृदुरोमिल आसिता रोग का प्रकोप होने पर मैन्कोजेब या रिडोमिल एम.जेड. 72 का छिड़काव 2.5 ग्राम/ली पानी की दर से 10–12 दिन के अन्तराल पर दो छिड़काव करें।
- फ्यूजेरियम प्रबंधन के लिए खेत तैयार करते समय मृदा में घूरे की खाद (250 किग्रा) में ट्राइकोडर्मा (5 किग्रा प्रति हे) को मिला कर प्रयोग करें।
- यदि भूमि में सूत्रकृमि (निमेटोड) अधिक संख्या में हो तो भूमि में कार्बोफ़ुरान 33 किग्रा. प्रति हे. का प्रयोग करें। खेत में सूत्रकृमि प्रबन्धन के लिये नीम की खली या लकड़ी का बुरादा 25 क्विंटल प्रति हे. की दर से मिलाने से इस का प्रकोप कम होता हैं।
- कटाई के बाद सस्यावशेष को इकट्ठा करके जला दें।

किसान भाई कैसे करें अनाज का सुरक्षित भंडारण

विनोद प्रकाश[1], अरुण कुमार सिंह[1], पुष्पा देवी[1] एवं दीपक यादव[2]

[1]चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौ. वि. वि. कानपुर,
[2]चौ. चरण सिंह कृषि वि. वि. मेरठ

किसान अपनी उपज का लगभग 70 प्रतिशत अनाज अपनी आवश्यकता पूर्ति के लिए रखता है। वह इस अनाज को विभिन्न प्रकार से भण्डारित करता है परन्तु किसानों की प्रचलित भण्डार व्यवस्था ठीक न होने के कारण लगभग 10.20 प्रतिशत अनाज भण्डारण के समय विभिन्न चूहों, कीटों एवं बीमारियों के द्वारा नष्ट कर दिया जाता है और बाकी बचे अनाज की गुणवत्ता एवं अंकुरण क्षमता कम हो जाती है। भण्डारण के समय अनाज प्रमुख रूप से तीन कारणों से खराब होता है।

1. भण्डारण के समय नमी की मात्रा।
2. भण्डारण के समय तापक्रम।
3. भण्डारण स्थान की दशा।

शोधों से ऐसा देखा गया है कि 28 से 32 सैल्सियस तापक्रम पर गोदामों के कीटों का विकास सबसे अधिक होता है। इसी प्रकार 10 प्रतिशत से अधिक नमी होने पर कीट अनाज को आसानी से खा सकते है। यदि अनाज को 14 से 15 प्रतिशत नमी पर भण्डारित कर दिया तो कई प्रकार के फफूंदे उत्पन्न हो जाती है, जो विभिन्न प्रकार के विषैले पदार्थ उत्पन्न करती है, ये विषैले पदार्थ मनुष्य के स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव डालते हैं। यदि अनाज को अधिक नमी पर भण्डारित कर दिया जाये तो इसमें उपस्थित कार्बोहाइड्रेट का किण्वन प्रारम्भ हो जाता है और एल्कोहल एवं एसिटिक एसिड उत्पन्न हो जाते हैं जिसके फलस्वरूप अनाज में खट्टी–खट्टी दुर्गन्ध आने लगती है। यदि बीज के लिए भण्डारित अनाज को 16 प्रतिशत या अधिक नमी पर रखा जाए तो उसकी अंकुरण क्षमता समाप्त हो जाती है, क्योंकि अनाज को कच्चे गोदामों या खुले वातावरण में भण्डारित करने पर अनाज वातावरण की नमी सोख लेता है जो इसे खराब कर देती है।

भण्डारित अनाज की निम्नांकित कारणों से हानि होती है–

1. **चूहा**– अनाज को खाने के अतिरिक्त उसको बड़ी मात्रा में बरबाद कर देता है साथ ही साथ अनाज की गुणवत्ता एवं अंकुरण क्षमता नष्ट करता है।
2. **कीट–घुन, पई, ढोरा आदि**– अनाज को खाकर खोखला कर देते हैं। अनाज में या गोदाम में नमी होने से इसका प्रकोप अधिक होता है। ये कीड़े पुराने बोरों, भूसा या अनाज के साथ गोदाम में प्रवेश करते है अथवा गोदाम में पहले से ही छिपे रहते हैं। भण्डारण के पूर्व अनाज को भली–भाँति सुखा लेना चाहिये। लगभग 20 प्रकार के कीड़े भण्डारित अनाज को हानि पहुंचाते है। उनमें से खपरा, सूंड वाली सुरसुरी (धान वीवल) दानों में सुराख करने वाली छोटी सुरसुरी, आटे की सुरसुरी, गेहूं, धान, ज्वार, जौ, और मक्का को मूंग तथा चने का ढ़ोरा दालों को और दानों की तितली गेहूं मक्का, ज्वार, जई, जौ आदि को अधिक हानि पहुंचाते हैं। ये कीट न केवल अनाज की मात्रा में कमी करते हैं, बल्कि उनका पौष्टिक गुण भी नष्ट कर देते हैं। ये कीट बीज की अंकुरण क्षमता पर भी बुरा प्रभाव डालते हैं।
3. **नमी**– अच्छी प्रकार सूखे अनाज में भी गीले बोरे, नम कमरों या बरसात में खुले हुए दरवाजों व खिड़कियों द्वारा नमी प्रवेश कर जाती है। नमी के कारण एक ओर घुन तेजी से बढ़ते है और दूसरी ओर अनाज सड़ने लगता है।
4. **फफूँदी और वैक्टीरिया**– अनाज या गोदाम में नमी की अधिकता से फफूँदी और बैक्टीरिया तेजी से बढ़ते हैं। इस कारण भी अनाज बरबाद हो जाता है।

बचाव के तरीके

- ➢ नया अनाज सुखाकर साफ गोदामों में रखें। तथा बीज को भण्डारित करने से पूर्व यह सुनिश्चित किया जाय कि उसमें 10 प्रतिशत से अधिक नमी नहीं होनी चाहिए।
- ➢ भण्डार गृह में नमी अथवा दीमक का प्रकोप नहीं होना चाहिए।
- ➢ गोदाम के सुराखों और दरारों आदि को सीमेन्ट से बन्द कर दें।
- ➢ नई बोरियां ही प्रयोग में लायें। यदि बोरियां पुरानी हो तो उनको

0.1 प्रतिशत मैलाथियान 50 ईसी (एक भाग दवाई व 500 भाग पानी) या 0.01 प्रतिशत फेनवलरेट 20 ईसी (एक भाग दवाई व 2000 भाग पानी) के घोल में 10–15 मिनट तक भिगोए एवं बोरियों को छायां में सुखा लें, इसके बाद अनाज भरें।

- बखारी की सफाई करके उसे धूप में अच्छी तरह सुखा लिया जाय तत्पश्चात ठंडा होने पर उसमें बीज रखकर सील कर देना चाहिये।
- बखारी को सील करने से पूर्व उसमें ई.डी.बी. एम्पुल अथवा एल्युमिनियम फास्फाइड की संस्तुत गोलियाँ रखी जा सकती है। प्रति एक कु. बीज के लिए 3 सी.सी. वाला एक एम्पुल अथवा 3 ग्राम की एल्मुनियम फास्फाइड की दो टिकियाँ प्रति टन की दर से रखनी चाहिये।
- ई.डी.बी. एम्पुल तथा एल्युमिनियम फास्फाइड से जहरीली गैस निकलती है अतः इसका प्रयोग जहाँ कहीं भी किया जाय गैस रिसाव रोकने के उपाय करने चाहिये या रहने वाले कक्ष से भण्डारण कुछ दूरी पर होना चाहिए।
- अनाज को बोरियों में भरकर रखना हो तो बोरियों के नीचे पर्याप्त मात्रा में भूसे की तह बिछा दें तथा दीवारों से 50 सेमी दूरी पर बोरे रखें। यदि भण्डारण बखारी में न करके किसी कमरे में किया जा रहा है तो सबसे पहले उस कमरे के घुन जैसे कीटों को समाप्त करने के लिये 50 प्रतिशत मैलाथियान एक लीटर दवा को 100 लीटर पानी में घोलकर 3 लीटर प्रति 1000 वर्ग फुट की दर से पूरे कक्ष में छिड़काव कर देना चाहिये।
- चना व दालों को ढोरा से सुरक्षित रखने के लिए अनाज के उपर 7 सेमी मोटी रेत की तह बनाएं।
- जिन जगहों पर अप्रैल–मई में अनाज का भण्डारण करना हो उनको कीड़ा रहित करने के लिए 0.5 प्रतिशत मैलाथियान (एक भाग दवाई व 100 भाग पानी) का छिड़काव फर्श, दीवारों और छत पर करें।
- भण्डारित कमरे को इस प्रकार मिट्टी के लेप से बन्द कर दिया जाय कि उसमें नमी का प्रवेश न होने पाये।
- केवल बीज के लिए 250 ग्राम मैलाथियान 5 प्रतिशत धूल को एक क्विंटल अनाज (जो बीज के लिए रखा हो) में मिला कर रखें। कमरे में एक–दो फिट भूसे की सतह फैलाकर उसके ऊपर बोरों में बीज का आनाज रखा जाना चाहिये और उसे चिन्हित भी कर लिया जाय।
- ढोरा से बचाव के लिए चना व दालों आदि पर सरसों व मूंगफली का तेल 75 मि.ली. प्रति किलोग्राम दानों की दर से अच्छी प्रकार मलकर लगाएं।

निरोधक उपाय

- डिसइन्फेस्टेशन (नाशीजीव विनाशन) हेतु मैलाथिआन 50 ई.सी. अथवा पायरेश्रम 2 ई.सी. पानी क्रमशः 1 एवं 100 लीटर मिलाकर 100 वर्ग मीटर क्षेत्रफल की दर से दीवालों छतों एवं फर्श पर फुहार करना चाहिए। अच्छा हो कि पुराने खाली बोरे भी इसी में झपिलाकर रख दें और स्टोर को पूर्णरूप से वायु आवागमन रहित करके कम से कम 7 दिन के लिए बन्द कर दें।
- अन्न को धूप में खूब सुखायें कि इनमें नमी 10 प्रतिशत से कम हो जाय अर्थात दांत से काटने पर कड़ाक की आवाज आवे। अनाज गर्म न भरें, ठण्डा हो जाने पर भरें।
- डनेज (विछावन) के रूप में लकड़ी के मजबूत तख्ते, भूसा, चटाई या पौलीथीन शीट का प्रयोग करें ताकि नीचे की नमी न आवे।
- कुछ अक्रिय पदार्थ जैसे–धूल, राख, भूसा की गांठे, खड़िया, चूना पाउडर, एक्ओवेटिड क्ले आदि का एक भाग लगभग 100 से 500 भाग अनाज में मिला कर रखें।
- कुछ क्षेत्रों में नीम की पत्तियाँ छोटी–2 पतली टहनियों सहित हरी अवस्था में अनाज के बीच–2 में रखते जाते है।
- खाद्यान्नों में हल्दी पाउडर या कोई खाद्य तेल 1:100 भाग अनाज में मिला कर रखते है। दलहनों में 1 मि.ली. सरसों का तेल या डालडा प्रति किलो दानों में मिला कर रखने से पल्स वीटिल का आक्रमण नहीं होता लेकिन ध्यान रहे कि नमी न हो अन्यथा फफूँदी लग जायेगी। साबुत दानों की बजाय दाल बनाकर रखने से इस कीट का प्रकोप नहीं होता हैं।

आलू की वैज्ञानिक खेती

अजय कुमार यादव, आर.बी. सिंह, आशुतोष उपाध्याय एवं आर.के. पाल

सब्जी विज्ञान विभाग चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कल्यानपुर, कानपुर–208024 (उ.प्र.)

आलू की खेती लगभग पूरे भारत में की जाती है। आलू की बुवाई से किसानों को अधिक लाभ की प्राप्ति हो सकती है। इसकी वजह यह है कि यह फसल 80 से 110 दिन की अवधि में ही तैयार हो जाती है। किसान आलू की उन्नतशील प्रजातियों की खेती करें। आलू लगाने के बाद किसान यदि चाहें तो रबी की कोई भी अन्य फसल जैसे पछेती गेहूँ की खेती कर सकते हैं। अगेती फसल की बुवाई किसानों को हरहाल में मध्य सितंबर से अक्टूबर के पहले पखवाड़े कर देनी चाहिए। आलू का उपयोग सब्जी एवं पौष्टिक आहार के रूप में किया जाता हैं, आलू में कार्बोहाइड्रेट के साथ–साथ विटामिन्स, आयरन तथा अमीनो अम्ल आदि पोषक तत्व काफी मात्रा में पाये जाते है।

जलवायुः आलू कि खेती ठण्डे मौसम में जहाँ पाले का प्रभाव नहीं होता है, सफलता पूर्वक कि जा सकती है। आलू के कंदों का निर्माण 18^0–20^0 से. तापक्रम पर सबसे अधिक होता है। आलू की अच्छी उपज के लिये दिन का तापमान 25^0–28^0 से. तथा रात का तापमान 8^0–15^0 से. के मध्य होना चाहिये। जैसे–जैसे तापक्रम में वृद्धि होती जाती है, वैसे ही कंदों के निर्माण में भी कमी होने लगती है तथा 30^0 सेंटीग्रेट तापक्रम होने पर कंदों का निर्माण रुक जाता है।

उपयुक्त भूमिः आलू को क्षारीय भूमि के अलावा सभी प्रकार की भूमियों में उगाया जा सकता है, परन्तु जीवांशयुक्त रेतीली दोमट या दोमट भूमि इसकी खेती के लिए सर्वोत्तम रहती है। इसकी खेती के लिए मिट्टी का पी.एच. मान 6.5 से 7.0 सर्वोत्तम माना गया है।

आलू की उन्नतिशील प्रजातियाँ

(क) अगेती फसल–

- कुफरी बहार– गूदा सफेद तथा अंकुर हरें रंग, 90 दिन अवधि, औसत उपज 325.0 कुन्तल/हेक्टेयर
- कुफरी चंद्रमुखी– पकने की अवधि 80 से 90 दिन, औसत उपजः 200 से–250 कुन्तल/हेक्टेयर
- कुफरी पुखराज–गूदा हल्का पीला, अवधि 80–90 दिन, उपज 375 कुन्तल/हेक्टेयर पिछेती झुलसा के प्रति अवरोधी
- कुफरी ख्याती– पकने की अवधि 80 से 100 दिन हैं, औसत उपजः 375 से – 400 कुन्तल/हेक्टेयर
- कुफरी सूर्या– पकने की अवधि 80 से 100 दिन हैं, औसत उपजः 250 से – 300 कुन्तल/हेक्टेयर
- कुफरी अशोका– पकने की अवधि 80 से 100 दिन हैं, औसत उपजः 250 से–300 कुन्तल/हेक्टेयर
- कुफरी लवकार– गूदा ठोस, चिप्स के लिये उत्तम, 70 से–80 दिन अवधि, उपज 200–250 कुन्तल/हेक्टेयर

(ख) मुख्य फसल–

- कुफरी लालिमा– कंद गोल व लाल रंग के, अगेती झुलसा रोग प्रतिरोधी, अवधि 100 से–110 दिन, उपज
- 350 से 400 कु./हे.
- कुफरी लिमा– कंद गोल व धूसर रंग के, अगेती झुलसा रोग प्रतिरोधी, अवधि 110 से–120 दिन, उपज 375 से–400 कु./हे.
- कुफरी गंगा– कंद गोल व सफेद रंग अवधि 90 दिन, उपज 375 से–400 कु./हे.
- कुफरी नीलकंठ– कंद गोल व बैगनी रंग, एन्टी आक्सीडडेन्ट, अवधि 90 से–100 दिन, उपज 350 से 400 कु./हे.
- कुफरी मोहन– कंद गोल व सफेद रंग अवधि 90 दिन, उपज 400 से–425 कु./हे.
- कुफरी ज्योति– कंद अण्डाकार, सफेद व उथली आँखों वाली, अवधि 90 से–100 दिन, उपज 350–400 कु./हे.
- कुफरी चिप्सोना 1, 3– चिप्स बनाने के लिये अति उत्तम, अवधि–100 से 110 दिन, उपज–300–350 कु./हे.

(ग) पिछेती फसल–

- कुफरी बादशाह– पिछेती झुलसा प्रतिरोधी, अवधि 100 से – 110 दिन, उपज 350 से – 400 कु./हे.
- कुफरी सिंदूरी– कंद लाल रंग

के गोल, मध्यम आकार, अगेती झुलसा रोग प्रति सहिष्णु, अवधि 110—120 दिन, उपज 400 कु./हे.

खेत की तैयारीः पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करें, दूसरी तथा तीसरी जुताई देशी हल/कल्टीवेटर से करनी चाहिए। यदि खेत में ढेले हों तो पाटा चलाकर मिट्टी को भुरभुरा बना लेना चाहिए। बुवाई के समय मिट्टी में नमी का पर्याप्त होना आवश्यक है।

खाद एवं उर्वरक प्रबंधनः आलू के खेत में हरी खाद देने से नाइट्रोजन, फास्फोरस तथा पोटाश की 20 से 30 प्रतिशत मात्रा की कम जरूरत पड़ती है। इतना ही नहीं हरी खाद के प्रयोग से आलू की प्रति हैक्टेयर 20—30 कु. तक पैदावार भी बढ़ जाती है। सड़ी हुई गोबर की खाद लगभग 200—250 कु. तथा 5 कु. सरसों या नीम की खली अथवा लगभग 40—50 कु. वर्मीकम्पोस्ट तथा रासायनिक उर्वरकों में 180 किग्रा. नाइट्रोजन, 80 किग्रा. फास्फोरस तथा 100—120 किग्रा. पोटास प्रति हेक्टेयर की दर से खेत में मिला देना चाहिये। जिसमें नाइट्रोजन की आधी मात्रा खेत की तैयारी के समय मिलाते है। षेष बची हुई नाइट्रोजन की मात्रा को दो भागों में बाँट कर एक भाग मिट्टी चढ़ाते समय तथा दूसरा भाग 40—45 दिन बाद खेत में खड़ी फसल में देना चाहिये।

फसल—चक्रः आलू की फसल शीघ्र तैयार हो जाती है। अगेती किस्में तो 80 से 90 दिन में ही तैयार हो जाती है। इसलिए फसल विविधिकरण के लिए यह एक आदर्श नकदी फसल है। इसके लिये आदर्श फसलचक्र जैसे— आलू—मक्का—मूँग; मक्का—आलू—प्याज; भिन्डी—आलू—प्याज, लोबिया—आलू— भिन्डी आदि फसल चक्र प्रणालियों को अपनाना चाहिये।

बुआई का समयः आलू की अगेती फसल के लिये बुवाई सितम्बर के तीसरे सप्ताह से अक्टूबर के प्रथम सप्ताह तक की जा सकती है। जल्दी तैयार होने वाले आलू जब सितम्बर से अक्टूबर में बोये जाते हैं, तब आलू बिना काटे ही बोये जाने चाहिए। क्योंकि काटकर बोने से ये गर्मी के कारण सड़ जाते हैं, जिससे फसल पैदावर में भारी हानि होती है। अल्पकालीन आलू सितम्बर में बोकर नवम्बर में खोदाई करने के बाद गेहूँ आदि की बुवाई की जा सकती है।

बीज का चुनावः आलू की खेती में बीज का बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान है, आलू बीज हमेशा किसी विश्वसनीय स्टोर जैसे बीज उत्पादन एजेन्सी, राज्य के कृषि एवं उद्यान विभाग, राष्ट्रीय बीज निगम, कृषि विश्वविद्यालय, कृषि विज्ञान केन्द्र आदि से क्रय करना चाहिये।

बीज का आकार और दूरीः आलू की फसल हेतु स्वस्थ एवं स्वच्छ बीज लगभग 25—40 ग्राम के होना चाहिए। जिनकी मोटाई 2.5 से 3.0 से.मी. हो। इससे कम या अधिक आकार या भार के बीज आर्थिक दृष्टिकोण से लाभप्रद नहीं हैं, क्योंकि अधिक बड़े आलू बोने से अधिक व्यय होता है। पंक्ति से पंक्ति की दूरी 60 सेमी. तथा कन्द से कन्द की दूरी 20 सेमी. रखते है।

बीज की मात्राः 25 से 40 ग्राम भार के लगभग 25 से 35 कु. प्रति हेक्टेयर बीज की आवश्यकता होती है।

बीजोपचारः शीतगृह से तुरन्त निकाले गये आलू को बोने से अंकुरण देर से और एक समान नहीं होता है। इसलिए बीज वाले आलू को शीत गृह से बुआई के 10 से 15 दिन पहले निकाल कर ठंडी तथा छायादार जगह पर फैला देना चाहिए। जिससे आलू में अंकुर फूट जाते हैं और फसल अंकुरण अच्छा तथा एक समान होता है। आलू की फसल हेतु बीज जनित व मृदा जनित रोगों से बचाव के लिए बीज को ट्राईकोड़रमा या बोरिक एसिड 30 ग्रा. प्रति लीटर की दर से पानी के घोल में 15 से 20 मिनट के लिए डालें तत्पश्चात घोल से निकालकर छाँव में सूखा लेना चाहियें, ट्राईकोड़रमा क्षारीय मृदाओं के लिए उपयोगी नहीं है।

बुआई की विधियाँः आलू की बुआई की अनेक विधियाँ प्रचलित हैं, जो कि भूमि की किस्म, नमी की मात्रा, यंत्रों की उपलब्धता, क्षेत्रफल इत्यादि पर निर्भर करती हैं। आलू लगाते समय खेत में पर्याप्त नमी होना आवश्यक है, लगाने के तुरन्त बाद सिंचाई करना उचित नहीं रहता हैं।

आलू बुआई की विधियां इस प्रकार है—

समतल खेत में आलू बोना— हल्की दोमट मिट्टी के लिए यह विधि सर्वोत्तम है। रस्सी की सहायता से निश्चित दूरी पर कतारें बनाकर देशी हल या कल्टीवेटर या प्लान्टर से कूंड़ बना लिये जाते हैं। इन्हीं कूँड़ों में निश्चित दूरी पर आलू बो दिये जाते हैं। बोने के पश्चात् आलूओं को पाटा चलाकर मिट्टी से ढँक दिया जाता है।

समतल खेत में आलू बोकर मिटटी चढ़ाना— इस विधि में खेत में 60 सेंटीमीटर की दूरी पर कतार बना ली जाती है। इन कतारों में लगभग 20 सेंटीमीटर की दूरी पर आलू के बीज रख दिये जाते हैं। इसके बाद फावड़े से बीजों पर दोनों और से मिट्टी चढ़ा दी जाती है। हल्की मिट्टी में बनी हुई कतारों पर 5 सेंटीमीटर गहरी कूँड़ें बनाकर आलू के बीज बो दिये जाते हैं

तथा पुनः मिट्टी चढ़ा दी जाती है।

मेंड़ों पर आलू की बुआई– इस विधि में मेंड बनाने वाले यंत्रों की सहायता से निश्चित दूरी पर मेंड़ें बनाती जाती हैं, मेंड़ों की ऊँचाई प्रारम्भ में 20–25 सेंटीमीटर रखी जाती है। बीज की दूरी एवं गहराई मशीन को व्यवस्थित करके करना चाहियें।

पोटैटो प्लांटर से बुआई– इस विधि में पोटैटो प्लांटर से मेंड़ व कूँड़ बनाते चलते हैं। पहली मेंड़ पर आलू बो दिये जाते हैं। जब प्लांटर पहली कूँड़ के पास से दूसरी कूँड़ में गुजरता है, तो पहली मेंड़ पर बोये हुए कन्दों को हल्की मिट्टी से ढँकता हुआ चला जाता है तथा अगली मेंड और कूँड़ तैयार हो जाते हैं।

सिंचाई प्रबंधनः आलू उथली जड़ वाली फसल है इसलिए इसे बार–बार सिंचाई की आवश्यकता होती है। सिंचाई की संख्या और अंतर भूमि की किस्म तथा मौसम पर निर्भर करता है। औसतन आलू की फसल की जल माँग 60 से 65 सेंटीमीटर होती है। बुआई के लगभग 20 दिन के अन्दर पहली सिंचाई हल्की करते है। सिंचाई के समय ध्यान रखना चाहिए कि 2/3 भाग मेड़ों तक ही पानी होना चाहिए। अधिक उपज के लिए यह आवश्यक है कि मिट्टी हमेशा नम रहे। जलवायु व मिट्टी की किस्म के अनुसार आलू में 3 से 4 सिंचाइयाँ देने की आवश्यकता पड़ती है। भारी भूमि में कम तथा हल्की भूमि में अधिक पानी की आवश्यकता होती है। नालियों का केवल आधा भाग ही पानी से भरना अच्छा होता हैं। मिट्टी में नमी की हानि रोकने के लिए नालियों में पलवार बिछा देनी चाहिए। आलू की फसल में अंकुरण समय, मिट्टी चढ़ाने के बाद तथा कंदों की वृद्धि के समय सिंचाई करना आवश्यक रहता है। खेत में जल निकास का उचित प्रबंधन होना चाहिए। जल भराव की स्थिति में कन्द सड़ जाते हैं। आलू की खुदाई के 7 से 10 दिन पूर्व सिंचाई बन्द कर देनी चाहिए।

खरपतवार नियंत्रणः आलू की फसल के साथ उगे खरपतवार को नष्ट करने हेतु आलू की फसल में एक या दो बार ही निंराई गुड़ाई की आवश्यकता पड़ती है, जिसे बुआई के 20 से 30 दिन बाद कर देना चाहिये। गुड़ाई करते समय यह ध्यान रखना चाहिये कि भूमि के भीतर के तने बाहर न आ जाये नहीं तो वे सूर्य की रोशनी से हरे हो जाते है।

- ❖ फसल–चक्र अपनाकर खरपतवारों को नियंत्रित किया जा सकता है।
- ❖ निराई–गुड़ाई करके खरपतवारों को नष्ट किया जा सकता है।
- ❖ गर्मी की जुताई से बहुवर्षीय खरपतवारों की जड़ें बरोह कंद और प्रकंद आदि भूमि की सतह पर आ जाते हैं, जो सूर्य की तीव्र रोशनी से सूखकर मर जाते हैं।
- ❖ पलवार के रूप में पुआल, सूखी घास–फूस, पौधे की पत्तियों, फसल अवशेष, प्लास्टिक पलवार इत्यादि का उपयोग किया जा सकता है, इनके द्वारा प्रभावी खरपतवार नियंत्रण होता है और खेत में नमी भी बनी रहती है।
- ❖ आलू में खरपतवार नियंत्रण हेतु मैट्रीव्यूजिन 750 ग्राम प्रति हेक्टेयर के दर से घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

मिट्टी चढ़ानाः आलू की खेती से भरपूर तथा गुणवत्ता युक्त उपज लेने के लिए पौधों पर मिट्टी चढ़ाना आवश्यक होता है। इससे कन्दों का विकास अच्छा होता है, मिट्टी न चढ़ाने से पौधों का आलू बनाने वाला भाग भूमि की ऊपरी सतह पर आकर हरे कन्द पैदा करने लगता है। खुले आलू के कन्दों में, सूर्य का प्रकाश या धूप पड़ने पर क्लोरोफिल के संश्लेषण से, सोलेनिन नामक एल्केलाइड बनने लगता है। इससे आलू हरे रंग के होने लगते हैं, जो कि स्वाद में कसैले एवं स्वास्थ के लिए हानिकारक होते है। इस प्रकार के आलुओं की गुणवत्ता खराब हो जाती है। इसलिए जब आलू के पौधे 10 से 15 सेंटीमीटर ऊँचे हो जाएँ, तब उन पर मिट्टी चढ़ाने का कार्य 30 दिन बाद दो पंक्तियों के बीच में नाइट्रोजन की आधी मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से डालकर करके प्रत्येक पंक्ति में मिट्टी चढ़ा देनी चाहियें तथा हल्का थपथपाकर दबा देना चाहियें जिससे मिट्टी में मजबूत पकड़ बनी रहें। यदि आलू की बुआई प्लांटर मशीन से की गई है, तब मिट्टी चढ़ाने की आवश्यकता नहीं होती है।

बेल (हॉलम) कटिंगः बेल (हॉलम) कटिंग कन्द परिपक्वता की अवस्था पर आलू के पौधे की पत्तियाँ पीली पड़ जाती हैं तथा तना लटक जाता है। यद्यपि यह किस्म विशेष पर निर्भर करता है, लेकिन सामान्यतौर पर मुख्य फसल में यह अवस्था बुवाई के बाद लगभग 90 से –95 दिन पर होती है। खुदाई के लिए सबसे अच्छा समय 90 दिन से अधिक पुराने पौधों को माना जाता हैं, क्योंकि इस अवस्था पर कन्द अधिकतम परिपक्वता तक पहुँच जाते है। बेल को नष्ट करने के लिए पेराक्वाट डाई क्लोराइड (2.5 मि.ली. मात्रा प्रति लीटर पानी) खरपतवारनाशी रसायन का भी प्रयोग किया जा सकता है।

फसल की खुदाई: आलू की फसल की खुदाई उसकी किस्म तथा उगाये जाने के उद्देश्य पर निर्भर करती हैं। यदि गेहूँ की फसल लेने के उद्येश्य से है तो लता काटने की कोई आवश्कता नही है। पूर्ण अवधि पर आलू की फसल उस समय पूरी तरह तैयार हो जाती है, जब पौधे सूख जाएँ या पत्ते पीले पड़ जाये एवं खोदने पर आलू के छिलके न उतरें खुदाई करते समय यह ध्यान रखना चाहिये कि कन्द पर किसी भी प्रकार की खरोच न हो, नहीं तो उनके जल्द सड़ने का भय रहता है। उपलब्धता के अनुसार, आलू के कंदो की खुदाई यांत्रिक रूप से करने के लिए पोटेटो डिगर का उपयोग किया जा सकता है।

पैदावार: आलू की खेती द्वारा पैदावार, भूमि के प्रकार, खाद का उपयोग, किस्म तथा फसल की देखभाल आदि कारकों पर निर्भर करती हैं सामान्य रूप से आलू की औसतन उपज 250 से 350 क्विंटल/हेक्टेयर पैदावार प्राप्त की जा सकती हैं।

कृषक लाभार्थी योजनाओं का नाम

- श्री अन्न योजना (Shree Anna Yojana)
- राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन योजना
- फसल विविधीकरण कार्यक्रम (सीडीपी) योजना
- सब मिशन आन ऐग्रिकल्चरल एक्सटेंशन (SAME)
- सब मिशन ऑन सीड्स एण्ड प्लान्टिंग मैटेरियल (एस.एम.एस.पी.) बीज ग्राम योजना (केन्द्र सेक्टर)
- सब मिशन ऑन एग्रीकल्चरल मेकेनाइजेशन एवं प्रमोशन ऑफ एग्रीकल्चरल मैकेनाइजेशन फॉर इन सीटू मैनेजमेण्ट ऑफ क्रॉप रेज्ड्यू योजनान्तर्गत सुविधाएं
- द मिलियन फार्मर्स स्कूल (किसान पाठशाला) सतत् कृषि के लिए राष्ट्रीय मिशन (NMSA) I National Mission for Sustainable Agriculture
- जैविक खेती प्रोत्साहन योजना
- रेनफेड एरिया डेवलपमेंट प्रोग्राम (RADP)
- प्रमाणित बीजों के वितरण पर अनुदान की योजना (राज्य सेक्टर)
- पीएम– कुसुम योजनान्तर्गत वर्ष 2022–23 में सोलर सिंचाई पम्प वितरण योजना
- मृदा में सूक्ष्म तत्वों की कमी को दूर करने एवं भूमि सुधार हेतु जिप्सम वितरण की योजना
- प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना (पर ड्राप मोर क्राप)
- पंडित दीनदयाल उपाध्याय किसान समृद्धि योजना
- प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना
- प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि (पी.एम.–किसान) योजना
- किसान क्रेडिट कार्ड योजना
- कृषक उत्पादन संगठन (एफ.पी.ओ.)
- पुष्प क्षेत्र विस्तार
- संरक्षित खेती को बढ़ावा देना
- मसाला क्षेत्र विस्तार
- रोपण सामग्री का उत्पादन पर ड्राप मोर क्राप (माइक्रोइरीगेशन) ड्रिप एवं स्प्रिंकलर सिंचाई
- राष्ट्रीय कृषि विकास योजना में संकर शाकभाजी उत्पादन
- खाद्य प्रसंस्करण इकाईयों की स्थापना
- गोवंशीय पशुओं में वर्गीकृत वीर्य (सेक्स सीमेन) के उपयोग की योजना (राज्य योजना)
- जोखिम प्रबन्धन एवं पशुधन
- मा. मुख्यमंत्री निराश्रित/बेसहारा गोवंश सहभागिता योजना
- बैकयार्ड पोल्ट्री कार्यक्रम
- प्रधानमंत्री मत्स्य सम्पदा योजना (पी.एम.एम.एस.वाई.)
- गन्ना विभाग द्वारा संचालित योजनाएं
- प्राकृतिक खेती योजना
- फसल अवशेष प्रबंधन (CRM)
- अनुसूचित जाति उपयोजना (SCSP)
- अनुसूचित जनजाति योजना (TSP)

बासमती चावल में कीटनाशकों का प्रयोग प्रतिबन्धित है

1. ट्राइसाइक्लोजोल
2. बुप्रोफोजिन
3. एसीफेट
4. क्लोरपाइरीफास
5. हेक्साकोनोजाल
6. प्रोपिकोनाजोल
7. थायोमेथाक्साम
8. प्रोफेनोफास
9. इमिडाक्लोरोप्रिड
10. कार्बेन्डाजिम

चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कानपुर के द्वारा श्री अन्न (मिलेट्स) की विकसित प्रजातियाँ

क्र0सं0	फसल	प्रजातियाँ
1.	बाजरा	बाजरा मैनूपुर ए.एस–571
2.	सांवा	अनुराग, कंचन, चन्दन
3.	रागी/मडुवा	निरमल, के–13, के–65
4.	ज्वार	बुन्देला, विजेता, मऊ टा0–1, मऊ टा0–2
5.	चेना	भावना
6.	कोदो	के0के0–1 एवं के0 के0–2
7.	काकुन	निश्चिल

army printing press
www.armyprintingpress.com
Lucknow (0522) 6565333